वक्तव्य

हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तकों का नितान्त अभाव है। गम्भीर वैज्ञानिक विषयों पर मौलिक रचना तो दूर की बात है, अभी हमारे यहाँ साधारण पाठकों के लिए विज्ञान की सामान्य किताबें भी तैयार नहीं हुई हैं।

इसका सारा दोष हमारे देश की वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली को ही है। हमारे हाई स्कूलों की प्रारम्भिक कक्षाओं में विज्ञान और नेचर स्टडी की जो शिक्षा दी जाती है वह शिक्षा का एक उपहास मात्र है। जो अध्यापक प्रकृति-दर्शन पढ़ाते हैं, उन्हें प्रायः स्वयम् अपने विषय का पूरा ज्ञान नहीं होता और न विषय के शिक्षण से कोई प्रेम ही। नतीजा यह होता है कि अपनी पाठ्य पुस्तक में विद्यार्थी मेंढक का जो पाठ पढ़ते हैं वह उनके लिए सदैव एक नीरस और जड़ चीज बनी रहती है। किताब के उस मेंढक को तो वे अच्छी तरह जानते हैं। '—मेंढक एक जानवर है। उसके चार पैर होते हैं, एक जीभ होती है, दो चमकीली आँखें होती हैं। उसकी बनावट बड़ी विचित्र होती है। वह वर्षा ऋतु में अंडे देता है।—"आदि-आदि बातें विद्यार्थी आपको एक साँस में सुना सकता है। परन्तु उस किताब से बाहर जो एक

सजीव और व्यक्तित्ववान् मेढक है उससे उसका कोई परिचय नहीं होता।

विज्ञान की उच्च शिक्षा की भी यही दशा है। एक तो सारी किताबें अँगरेजी में पढनी पडती हैं और फिर वे हमारे देश की परिस्थिति के जरा भी अनुकूल नहीं होता। युरोप के देशों में तो दस वर्ष के एक छोटे बालक से भी इस बात की आशा की जाती है कि विज्ञान के साधारण सिद्धान्तों से उसका परिचय स्थापित हो चुका है। अतएव आगे चल कर यदि शुद्ध वैज्ञानिक ढँग से लिखी गयी पुस्तकें उसे पढने को मिलती हैं तो यह उचित ही है। इन पुस्तकों में स्वाभाविक रूप से ही विज्ञान की क्लिष्ट परिभाषाओं, फारमूलों और समीकरण आदि की अधिकता होती है। परन्तु उनके पठन-पाठन में विद्यार्थियों को कोई अडचन मालूम नहीं देती, क्योंकि विज्ञान से सम्बन्ध रखने वाली अवान्तर बातों का पहले से ही उनको बहुत काफी ज्ञान होता है। वे बहुत कुछ पहले ही पढ चुकते हैं और इसलिए पाठ्य विषय में दिलचस्पी भी लेने लगते हैं।

परन्तु हमारे देश में विज्ञान की प्रारम्भिक शिक्षा का उचित प्रबन्ध न होने, और रोचक ढँग से लिखी गयी सरल वैज्ञानिक पुस्तकों का अभाव होने के कारण विज्ञान की उच्च शिक्षा बिलकुल ही बेमतलब भावित होती है। विद्यार्थी येन केन प्रकारेण पाठ्य पुस्तकों को कण्ठस्थ करके परीक्षाएँ तो उत्तीर्ण कर लेते हैं, परन्तु उस से उन

कोई हित नहीं होता। सम्भव है कुछ आर्थिक लाभ हो जाय, परन्तु विज्ञान की शिक्षा का जो वास्तविक उद्देश्य है वह कभी पूरा नहीं होता। विज्ञान का इतना काफी अध्ययन करने के बाद न तो उनके दृष्टिकोण में ही कुछ परिवर्तन होता है, न प्रकृति के व्यापारों में ही वे कुछ रस लेना सीखते हैं और न ज्ञान की खोज के द्वारा अपने या दूसरों के जीवन को ही कुछ अधिक सुखमय बना पाते हैं। विज्ञान की पढाई तो उनके लिए एक मुसीबत रहती है। जितनी जल्दी उससे पीछा छूटे उतना ही अच्छा।

इसका एक मात्र कारण उपयुक्त पाठ्य पुस्तकों की कमी और शिक्षकों की पाठ्य विषय के प्रति उदासीनता ही है। इन्टरमीडियेट में मैंने भौतिकशास्त्र की जो किताब पढी थी वह अपने ढँग की एक अत्युत्कृष्ट पुस्तक है, परन्तु उस किताब में मुझे कभी रस नहीं मिला। वह मुझे सदैव बडी शुष्क और नीरस मालूम हुई। क्योंकि अब भी प्रकृति के गूढ रहस्यों को जानने और समझने की उत्कंठा मेरे मन में जाग्रत नहीं हो सकी थी। यह तो तभी होता जब प्रकृति के साथ मेरा कोई सम्पर्क स्थापित हुआ होता, जब मुझे प्रकृति की अपूर्वता और रहस्यमयता का कुछ परिचय दिया गया होता। मैट्रिक तक विज्ञान की मेरी जो शिक्षा थी वह खडिया मिट्टी या शक्कर के घोल को पहचानने अथवा खडी, पडी या सीधी लकीर को सही-सही नाप लेने तक ही सीमित थी। मुझे खूब स्मरण है कि हमारे अध्यापक भौतिक

शास्त्र पढाते समय न्यूटन और फैरेडे का नाम तो अनेक बार लेते थे, परन्तु उन्होंने हम लोगों को कभी विज्ञान के इन दोनों महारथियों के जीवन का परिचय देने की आवश्यकता नहीं समझी। उस समय तक मैं तो कम से कम न्यूटन की जीवनी और उसके आविष्कारों से अधिक परिचित नहीं था, सिवा इसके कि बगीचे में एक सेब को गिरते हुए देख कर उसने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त का आविष्कार किया। परन्तु इतना मेरे लिए पर्याप्त नहा था। मेरा मन तो कुछ और चाहता था जो स्कूल या कालेज के भीतर मुझे कभी नहीं मिला।

विज्ञान की उच्च शिक्षा देने के पूर्व बालकों के मन में हमें विज्ञान के अध्ययन की रुचि उत्पन्न करनी होगी। परन्तु इसकी सारी ज़िम्मेदारी शिक्षा-संस्थाओं के मत्थे नहीं मढी जा सकती। बालकों के मन में ज्ञान के प्रति जिज्ञासा का भाव जाग्रत हो, जितना वे जानते हैं उससे अधिक जानने की उत्कंठा उनके हृदय में पैदा हो ऐसा कोई प्रयत्न आरम्भ से हमारे यहाँ नहीं किया जाता। और यदि वैसी इच्छा मौजूद भी हो तो साधनों की हमारे यहाँ बडी कमी है। सब से बडी आवश्यकता तो है इस प्रकार के वैज्ञानिक साहित्य-निर्माण की जो न केवल बालकों के मन को प्रकृति के गूढ रहस्यों की ओर आकृष्ट करके चमत्कृत करे, बल्कि प्रौढ पाठकों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो, क्योंकि हमारे देश में जहाँ तक साधारण ज्ञान का सम्बन्ध है, बालक और उनके माता पिता एक ही धरातल पर हैं।

हिन्दी में इस प्रकार के वैज्ञानिक साहित्य की कमी को मैं सदैव ही महसूस करता रहा हूँ। वास्तव में मेरे साहित्यिक जीवन का श्रीगणेश ही इस महत्वाकाँक्षा को लेकर हुआ कि यदि सम्भव हो तो कभी बालकों के लिए वैज्ञानिक पुस्तकें लिख कर ही अपनी लेखनी को सफल करूँ। इस उद्देश्य से प्रारम्भ में दो एक पुस्तकें मैंने लिखीं भी, परन्तु उपयुक्त साधन की कमी के कारण मेरा वह उत्साह कुछ दिनों के लिए मन्द पड़ गया।

आज कई वर्षों बाद मुझे फिर अपने उस प्रयास को जारी करने का अवसर मिला है। "पदार्थ परिचय" के बाद मेरी यह दूसरी पुस्तक है जिसे मैं पाठकों के सामने लेकर उपस्थित हो रहा हूँ।

"पदार्थ-परिचय" में मैंने भौतिक-जगत के प्रारम्भिक सिद्धान्तों का परिचय अपने बाल-पाठकों को दिया था। आज जीव जगत के रोचक क्षेत्र में मैं उन्हें लिये जा रहा हूँ। इसका यह आशय नहीं कि अपने इस लघु प्रयास द्वारा मैंने उन्हें प्रकृति के विशाल आँगन में ले जाकर खड़ा कर दिया है। नहीं। मेरे जैसे व्यक्ति के लिए यह कार्य बड़ा दुष्कर है। उसके लिए जूलियन हक्सले, और टामसन का गम्भीर वैज्ञानिक अध्ययन और किसी रवि या शरत् की व्यापक कल्पना चाहिए। मैंने तो प्रकृति के रंगमंच पर से अपने भौंडे ढँग से परदे का एक छोर भर हटाया है। इस आशा से कि पाठकों को उसकी एक झलक मिल जाय और उनके मन में बाकी रहस्य-भेदन की

उत्कंठा जाग्रत हो उठे। मैं कह नहीं सकता, इस कार्य में मुझे कितनी सफलता मिली है।

हिन्दी के जो योग्य लेखक हैं वैज्ञानिक साहित्य रचना की ओर उनका कोई ध्यान नहीं है। वे यदि इस क्षेत्र में आयें तो मेरा विश्वास है, हिन्दी का बहुत कुछ उपकार हो सकता है। परन्तु वे विज्ञान को साहित्य से अलग चीज़ समझते हैं। वे चूंकि साहित्य सेवी हैं, इसलिए विज्ञान उनके लिए परित्याज्य है। वैज्ञानिक नाम के कुछ विशेष जीव ही इस प्रकार की पुस्तकों के लिखने के अधिकारी हैं, और यह काम उनको ही शोभा भी देता है, ऐसी उनकी धारणा है। परन्तु विज्ञान का एक ऐसा अंग भी है जिसके अध्ययन के लिए न तो बहुमूल्य औजारों और न किसी बड़ी प्रयोगशाला की ही आवश्यकता है और जो उतना ही सरस और कवित्वपूर्ण है जितना कोई भी काव्य! और फिर जगन्नियन्ता की यह सृष्टि स्वयम् एक विराट् काव्य ही तो है!

मेटरलिंक ने मधुमक्खियों पर एक सुन्दर किताब लिखी है और सुना है रविबाबू ने भी इस वृद्धावस्था में बालकों के लिए प्रकृति-विज्ञान पर एक पोथी लिखकर अपने कवि-हृदय को सन्तुष्ट किया है। इसका यह आशय नहीं कि मैं साहित्य के इन महारथियों की बराबरी करने का साहस कर रहा हूँ। मेरे कहने का आशय केवल यह है कि विशुद्ध विज्ञान की खोज के अलावा इस विषय का एक ऐसा भी पहलू है जिसके द्वारा हम अपनी साहित्यिक योग्यता और कवि-

कल्पना का वैसा ही परिचय दे सकते हैं, जैसा साहित्य की किसी अन्य रचना द्वारा।

और यह बात मुझे इसलिए कहनी पड़ी कि मेरे कुछ मित्रों ने मुझसे कहा कि अब तो मैं साहित्य छोड़कर बच्चों के लिए किताबें लिखने लगा हूँ। परन्तु बच्चों के लिए किताबें लिखना मुझे कहानी लिखने से अधिक कठिन जान पड़ा है। उसमें यदि मुझे सफलता मिले तो मैं अपने को धन्य मानूँगा।

पुस्तक के विषय में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। प्रारम्भ में ही उसका परिचय सन्तू के मास्टर साहब ने दे दिया है। उसमें आपको कोई नयी बात नहीं मिलेगी। परन्तु मेरी यह धारणा अवश्य है कि हिन्दी में जीव-विज्ञान के इस पहलू को लेकर अब तक कोई पुस्तक नहीं लिखी गयी है। अतएव बालकों के लिए तो यह उपयोगी सिद्ध होगी ही, परन्तु प्रौढ़ पाठक भी इससे बहुत कुछ लाभ उठा सकते हैं, यदि वे इसे बालकों के लिए लिखी गयी समझ कर ताच्छल्य-पूर्वक एक ओर उठा कर न रख दें। काम विज्ञान की गन्दी किताबें पढ़ने का जिन्हें शौक है उन्हें तो यह पुस्तक पढ़ना ही चाहिए। यहाँ उन को जनन विज्ञान का एक ऐसा स्वस्थ और सात्विक पहलू देखने को मिलेगा, जिससे उनकी ज्ञान-वृद्धि ही नहीं होगी, बल्कि मानसिक-स्वास्थ्य का सुधार भी होगा। जनन-विज्ञान के सम्बन्ध की जो बातें हैं वे तो बहुत ही व्यापक, बहुत ही पवित्र, बहुत ही सुन्दर और अद्भुत

हैं। वे बालक से लेकर बूढ़े तक के लिए, बहन से लेकर भाई तक के लिए, मा से लेकर पुत्र तक के लिए—सभी के लिए एक सी पवित्र और आकर्षक हैं। वे सब बात लज्जा या सकोच नाम की वस्तु से बहुत परे हैं। बाकी जो बातें हैं उनके जानने की हम न तो आवश्यकता ही होती है, और न उनके लिखे जाने की कोइ जरूरत ही।

इसका यह आशय नहा कि बालकों के लिए मैंने काम-विज्ञान की कोइ किताब लिखी है। नहा! आप जिसे काम विज्ञान समझते हैं, आदि से अन्त तक इस किताब में आपको उसका कोई उल्लेख नहीं मिलेगा। एक वाक्य भी नहीं, एक शब्द भी नहा।

यह तो जीव विज्ञान की एक पोथी है, जिसके द्वारा बालकों को मैंने प्रकृति के एक अदभुत और महान् रहस्य को, प्रकृति के एक सर्व-व्यापी नियम को, समझाने की कोशिश की है।

आशा करता हूँ, पाठकों को मेरा यह प्रयास रुचेगा।

पुस्तक का जो कवर डिजाइन है उसके लिए मैं चित्रकार श्रीरघुवीरसिंह जी सघल का कृतज्ञ हूँ।

गरौठा (झाँसी)

विजयादशमी सम्वत् १९९०

—लेखक

सूची

चिड़िया का संसार

प्रारम्भिक

उस दिन सन्तू आया और अचानक पूछ बैठा—"मास्टर साहब, यह सब कैसे होता है, मेरी समझ में नहीं आता।"

मैंने किंचित आश्चर्य से उसे देखते हुए कहा—"क्या सन्तू ?"

"यही कि माँ के पेट में बच्चे कहाँ से आते हैं और कैसे पैदा होते हैं, मुझे बताइये।"

मैं सहसा चुप होकर रह गया। बालक के इस प्रश्न से मुझे अधिक आश्चर्य नहीं हुआ। फिर भी यकायक मुझे कोई जवाब नहीं सूझा। कल ही उसके भाई जन्मा है। इस कारण उसकी यह जिज्ञासा स्वाभाविक थी। 'बच्चे कैसे पैदा होते हैं ?' ओह, कितना सीधा प्रश्न है ! यदि आप का पुत्र कभी आप से ऐसा प्रश्न कर बैठे तो आप क्या जवाब देंगे ?

अव्वल तो वह आपसे कभी ऐसा प्रश्न करेगा ही नहीं; क्योंकि वह जानता है कि उसे ठीक जवाब नहीं मिलने का। और यदि उसने पूछने का साहस भी किया तो मेरा विश्वास है कि आप

थोड़ी देर के लिए किकर्त्तव्य-विमूढ़ होकर रह जायेंगे, और अन्त में यही कहेंगे, "बच्चे ईश्वर पैदा करता है।"

बालक आपकी बात मान लेगा। परन्तु आपके उत्तर से उसकी मनस्तुष्टि होगी क्या ?

यह सन्तू जिसका मैं लगातार तीन वर्ष से शिक्षक हूँ, बड़ा तीव्र-बुद्धि बालक है। उसका मन जिज्ञासा से भरा है। वह सदैव मुझसे तरह-तरह के प्रश्न किया करता है। प्रश्न करने की यह प्रवृत्ति बालकों मे स्वाभाविक है। सन्तू मे कुछ अधिक है। इसका कारण कदाचित् यह है कि मैं उसके प्रश्नों को कभी टालता नहीं। वह चाहे जैसा अनहोना प्रश्न मुझसे करे, मैं जवाब देने का प्रयास करता हूँ। इसका नतीजा यह हुआ है कि अपनी अवस्था के अन्य बालकों की अपेक्षा साधारण विषयों का उसे अधिक ज्ञान है। वह जब कोई प्रश्न करता है, तब मुझे प्रसन्नता होती है। अतएव प्रश्न करने मे वह कभी हिचकता नहीं। इस सम्बन्ध में वह अत्यन्त निस्संकोच और निर्भीक है।

'परन्तु बच्चे कैसे पैदा होते हैं ?' क्या इस प्रश्न का उत्तर मैं इस बालक को दे सकूँगा ? क्या प्रकृति का यह अद्भुत रहस्य मैं इसे समझा सकूँगा ? अभी मुश्किल से यह बारह वर्ष का है। क्या मैं इससे कह दूँ कि अभी तुम इन सब बातों को समझने के योग्य नहीं ? नहीं, यह तो इसके साथ अन्याय होगा। परन्तु

प्रश्न यह है, क्या मैं इसे समझा भी सकूँगा ? मैंने डार्विन, स्पेन्सर और हक्सले पढ़ा है। जीव-विज्ञान की अनेक पुस्तकों का मैंने अध्ययन किया है। यह तो कुछ भी कठिन नहीं है। उन्हें आप भी पढ़ और समझ सकते हैं। परन्तु इस अत्यन्त अद्भुत विषय का ज्ञान इस बालक को कैसे कराऊँ ? सृष्टि का यह आश्चर्यजनक व्यापार इसे कैसे समझाऊँ ? कहाँ से अपनी बात शुरू करूँ और कहाँ खतम करूँ ? मैं शायद बहुत सी कठिन बातें इसे समझा सकता हूँ, परन्तु यह तो कठिन से कठिनतर विषय है। मेरी बुद्धि यहाँ काम देगी या नहीं, मैं कह नहीं सकता।

मैंने उस बालक को बताया कि तुम्हारे प्रश्न का जवाब तो बड़ा कठिन है। माँ के गर्भ मे बच्चे कहाँ से आते हैं और कैसे पैदा होते हैं, यह सृष्टि की एक महान् आश्चर्यजनक कहानी है। यह एक अत्यन्त पवित्र विषय है, जिसकी चर्चा गम्भीरतापूर्वक ही होनी चाहिए। परन्तु मैं तुम्हें यह कहानी अवश्य सुनाऊँगा और समझाऊँगा।

"तो सुनाइये न," बालक ने उत्सुक होकर कहा।

"इतनी जल्दी नहीं। इसके लिए मुझे तैयारी करनी होगी। इसके अलावा घंटे आध घंटे में यह रहस्य में तुम्हें नहीं समझा सकूँगा। हम लोग सवेरे जब बगीचे में घूमने जाते हैं, तभी इस विषय की चरचा करेंगे। उस समय शान्ता और मन्नू भी साथ

रहेंगे। यद्यपि अभी सारी बातें उनकी समझ में नहीं आयेंगी ; परन्तु मैं चाहता हूँ कि वे लोग भी यह कहानी सुनें।

मेरी यह बात सुन कर सन्तू प्रसन्न होकर चला गया। परन्तु मैं विचार-निमग्न हो रहा। मैंने जीवन की अद्भुत कहानी सुनाने का वादा जरूर उससे कर दिया। परन्तु मुझे सन्देह था कि यह विषय उसे सुगमतापूर्वक समझा सकूँगा भी।

फिर भी उस बालक को और उसके छोटे भाई को, और उससे भी छोटी उसकी बहन को जीवन की सारी कहानी मैंने सुनायी। सन्तू ने उसे बड़े चाव से सुना। कहानी उसे बहुत पसन्द आयी। साथ ही मैंने अनुभव किया कि उसने अनेक नयी और आवश्यक बातें सीखीं। तब एक दिन मैंने उस पर अपनी इच्छा प्रकट की, 'सन्तू, उस दिन मैंने तुम्हें जीवन की जो कहानी सुनायी थी, उसे मैं ज्यों की त्यों लिख रहा हूँ। मेरे एक मित्र उसे छापना चाहते हैं।'

सन्तू तुरन्त बोला—"जरूर लिखिये, जरूर लिखिये। और और जब आप लिख चुकें तब एक बार मुझे पढ़ने को दीजिये। एक बार उसे आपके मुँह से सुन चुका हूँ। अब उसे पढ़ूँगा भी। जहाँ कोई बात मेरी समझ में नहीं आयगी, मैं आपको बताऊँगा भी। इस प्रकार आपको यह समझने में मदद मिल जायगी कि आप की सहायता के बिना और सब बालक भी आप की पुस्तक समझ सकेंगे या नहीं।"

सन्तू की बात मुझे बहुत पसन्द आयी। किताब मैंने लिखी, और सन्तू ने उसका सम्पादन किया! जहाँ जो बात उसकी समझ में नहीं आयी, वहाँ मैंने फिर से समझाने की कोशिश की। इस प्रकार यह किताब अब प्रेस में जा रही है। इस पर अब सन्तू का ही अधिकार नहीं रहा। यह अब उसकी उम्र के सभी बालकों की सम्पत्ति है। सभी बालक अब इसे पढ़ सकते हैं और इससे लाभ उठा सकते हैं।

जैसा कि पाठक देखेंगे, यह छोटी सी पुस्तक मैंने विद्वानों और आलोचकों के लिए नहीं लिखी। मूलतः इसकी रचना एक बारह वर्ष के छोटे बालक के लिए हुई है, जो एक देहात में रहता है, लोअर प्राइमरी की चौथी कक्षा तक जिसने शिक्षा पायी है, और उसके उपरान्त जिसकी शिक्षा का भार मुझ जैसे अयोग्य व्यक्ति के कन्धों पर लाद दिया गया है। इसलिए सम्भव है विद्वज्जनों के लिए पुस्तक अधिक रोचक और ज्ञानवर्द्धक सिद्ध न हो, परन्तु इसे पढ़ने के उपरान्त सन्तू की उम्र के अन्य बालकों की बुद्धि का तनिक भी विकास हुआ, जितना वे जानते हैं उससे अधिक जानने और समझने की तनिक भी लालसा उनके मन में जाग्रत हुई, तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

पहला अध्याय

कहानी का प्रारम्भ

एक दिन सुबह हम लोग बगीचे में पहुँचे। साथ में सब बच्चे भी थे। मैंने सन्तू से कहा—"अच्छा भाई सन्तू, आज हम तुम्हारी कहानी शुरू करेंगे।"

'जीव की कहानी ?'

"हाँ ! तुम लोग सुनने के लिए तैयार हो न ? और शान्ता भ तैयार मालूम होती है। तुम्हारे प्रश्न का जवाब देने के लिए मुझे तीन-चार दिन रुकना पड़ा। मैंने तुमसे कहा था कि तुम्हारे प्रश्न का जवाब आसान नहीं है। मुझे उसके लिए स्वयम् थोड़ा पढ़ना पड़ा और बगीचे में भी थोड़ी तैयारी करनी पड़ी।"

"बगीचे में तैयारी करनी पड़ी !"

"हाँ ! शान्ता को इसमें आश्चर्य हो रहा है। परन्तु यहाँ यदि यह बगीचा न होता तो जो चीजें तुम यहाँ देख रही हो, उन सबको

मुझे घर पर ही इकट्ठा करना पड़ता। परन्तु वह कार्य बड़ा कठिन होता। यहाँ जो तरह-तरह के पेड़ और पौधे लगे हैं, वे सब तुम्हें एक जगह नहीं मिल सकते थे। हमारी जो कहानी है, उसके सुनने और समझने के लिए यह बग़ीचा ही सर्वोत्तम स्थान है।"

"यह देखो माली से कह कर मैंने तुम्हारे लिए कई तरह के बीज इकट्ठा कर रक्खे हैं। यह किस चीज का बीज है?"

"मटर का?"

"यह?"

"सेम का?"

"यह?"

"यह मक्का का बीज है।"

सेम का बीज

'जिसे हम भुट्टा कहते हैं, यह उसीका बीज है। और यह कद्दू का बीज है। यह खीरा का बीज है। इस प्रकार यह देखो मेरी इस जेब में कई तरह के बीज हैं।"

"इन बीजों से कहानी का क्या सम्बन्ध?"

"ओह बहुत बड़ा सम्बन्ध है। और यह देखो मैंने तुम्हारे लिए एक क्यारी तैयार की है। इसमें मैंने अलग-अलग कई तरह के बीज बो दिये हैं। देखो उन सब पर नाम लिखे हैं। तुम क्या कह रही हो शान्ता? कुछ बीज बोओगी?"

'हाँ।'

"अच्छी बात है। मैंने उसका भी प्रबन्ध किया है। यह देखो, मैंने काठ के छोटे-छोटे बक्सइक्ट्ठे किये हैं। जानते हो मन्नू, ये वही बक्सहैं जिनमे तुम्हारे पिताजी अपने दवाखाने के लिए दवाइयाँ मगाते हैं। आज ये सब हमारेकाम आ गये हैं। इनमे मैंने कुछ भुरभुरी मिट्टी और लकडी का बुरादा भर दिया है। लकडी का बुरादा इनमें इसलिए भर दिया है कि मिट्टी सख्त न होजाय, और किसी पौधे को यदि इसमें से उखाडना पडे, तो उसकी जड को नुक्सान न पहुँचे। उन बक्सो मे तुम बीज बोना। समझीं शान्ता। हाँ, और तुम भी मन्नू। सब लोग अपने-अपने बीज बोयेंगे, और उनको रोज पानी से सींचेगे। हम देखेंगे कि किसके बीज सबसे अच्छे उगते हैं। क्यों न शान्ता ?"

मगर इन बीजों का क्या होगा ?'

'तुम इतना व्यग्र क्यो रहे हो ? बस समझ लो कि कहानी शुरू हो गयी।'

'आज कल वर्षा ऋतु है। पानी बरस गया है। इसलिए हम लोगो की समस्या बहुत कुछ हल हो गयी है। 'जीवन की कहानी', सुनने के लिए वर्षा से अच्छी और कौन ऋतु हो सकती है, जब चारों तरफ फूल पत्ती और पौधों मे नया जीवन फूटता नजर आता है। बगीचे मे देखो, कितनी तरह के पौधे उग उठे हैं। वर्षा

के पहले यही जमीन बिलकुल सूखी थी। हरियाली का कहीं नाम तक नहीं था। परन्तु अब तरह-तरह की घास के नये अँकुरों से जमीन ढक गयी है। वर्षा की बूँदें पड़ने से यह घास कहाँ से आ जाती है कुछ पता नहीं चलता। क्या तुमने कभी सोचा है कि हर साल यह घास उग कर बड़ी होती है। सूख कर नष्ट हो जाती है। और वर्षा का प्रारम्भ होते ही घास के नये-नये अँकुरे फूट पड़ते हैं। यह सचमुच कितना अद्भुत है!

बाग के उस कोने में देखो। पँवार के नन्हें-नन्हें पौधों से जमीन बिलकुल ढक गयी है। तुम पंवार तो जानते हो न? अभी कुछ दिनों में इसमें लम्बी-लम्बी फली निकलेंगी, जिनमें उर्द की दाल की तरह के छोटे-छोटे बीज होते हैं। अभी पन्द्रह बीस दिन पूर्व उस जगह पंवार के पौधों का नाम नहीं था। परन्तु ये पौधे आज कहाँ से आ गये? माली ने उनको बोया नहीं। घास को कभी बोने की जरूरत नहीं होती। वह स्वयम् ही उग आती है। फिर ये पंवार के पौधे, यह तरह-तरह की घास जिसका कि बगीचे में कोई उपयोग नहीं है, कहाँ से आ गयी? बिना किसी के प्रयत्न और परिश्रम के ये पौधे किस तरह पैदा होते हैं, क्या तुमने कभी सोचा है?

सन्तू के मन में जैसे कुछ जवाब है। और शान्ता भी कुछ कहना चाहती है। और मन्तू की समझ में तो कुछ आ ही नहीं रहा है।

और फिर वर्षा में कितनी तरह के जीव नजर आते हैं! अनेक तरह के कीड़े-मकोड़े वर्षा में पैदा होते हैं। वे पैदा होकर नष्ट हो जाते हैं। फिर नजर नहीं आते। बहुत से कीड़े-मकोड़े तो केवल वर्षा में ही दिखायी पड़ते हैं। परन्तु कितनी तरह के कीड़े-मकोड़े वर्षा का प्रारम्भ होते ही नजर आने लगते हैं, इसका कुछ ठिकाना नहीं।

सन्तू ने क्या कहा? मेंढक! ओह! ठीक है। मेंढक तो वर्षा का जीव ही है। वह वर्षा ऋतु का सब से पहला जीव है जो हमें प्रकृति के जागरण का सन्देश देता है। पानी की पहली बूँदे पड़ते ही वह अपनी टर्र-टर्र से मानों सारे सोये हुए जीव-धारियों को, सारे पौधों को, वृक्षों के नन्हें-नन्हें बच्चों को, सोते से जगाता है। और फिर स्वयम इस तरह गायब हो जाता है कि साल भर तक उसकी आवाज सुनायी ही नहीं देती।

ओह! जरूर ये मेंढक हैं। घास के ऊपर कितने ढेर के ढेर उछल रहे हैं। शान्ता, तुम क्या कह रही हो? आसमान से बरसे हैं? नहीं मेंढक आसमान से नहीं बरसते। फिर घास के ये जो इतने पौधे उग उठे हैं, ये कहाँ से आये? पानी पड़े हुए अब बहुत दिन हो गये हैं। मेंढक के अंडे अब तुम्हें नहीं मिलेंगे। अन्यथा बगीचे के उस तरफ जो पुराना पोखरा है उसके किनारे ले जाकर मैं तुम्हें दिखाता कि मेंढक के असंख्य अंडे वहाँ तैर रहे हैं।

उनको देखने के बाद तुम्हे पता चल जाता कि ये छोटे छोटे मेँढक उन अंडों से निकल कर ही बड़े हुए हैं।"

"इतने बहुत से मेँढक!"

हाँ, तुम्हें आश्चर्य हो रहा है। परन्तु मेँढक यदि इतने अडे न दे तो प्रकृति का काम फिर कैसे चले। मेँढक बहुत निर्बल जीव है। वह आप अपनी रक्षा बहुत कम कर पाता है। उसे अनेक मुसीबतें लगी रहती हैं। ये जो छोटे-छोटे मेँढक तुम देख रहे हो, इनमे से बहुत थोडे ही बडे होकर पारसाल तक जीवित रह सकेंगे। बाकी नष्ट हो जायेंगे। चील है, कौआ है, साँप है, और भी अनेक जीव हैं, जिनको मेंढक पसन्द है। उनके कारण मेंढक की जिन्दगी हमेशा ही खतरे में रहती है। इसलिए प्रकृति ने ऐसा प्रबन्ध कर रक्खा है कि उनकी जाति बिलकुल नष्ट न हो।

एक मादा मेंढक हजारो लाखों अडे देती है। मैंने तुम्हारे लिए एक बडा-सा मेंढक पकड कर रक्खा है। उसे मैंने एक बक्स में रख छोडा है। बक्स के एक ओर काँच का तख्ता लगा है, जिसमे मेंढक को तुम अच्छी तरह देख सको। तुम यह ख्याल मत करना कि उसे मैंने किसी प्रकार का कष्ट दे रक्खा है। नहीं, उस बक्स के भीतर उसके खाने पीने का पूरा प्रबन्ध है। उसे इस प्रकार कैद करके रखने की सचमुच आवश्यकता नहीं थी। परन्तु

मेंढक को लोग एक घृणित जीव समझते हैं। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम उसे नजदीक से देखो। वह माली के पास है। मैं अभी मँगवाऊँगा। उसके शरीर की विचित्र बनावट, उसकी दो बड़ी-बड़ी गोल आँखें, उसके पंजे, उसकी जीभ, ये सब तुम्हारे मन में एक विचित्र कुतूहल उत्पन्न करेगी। और यदि उसके जीवन की कहानी मैं तुम्हें सुनाऊँ तो तुम आश्चर्य के सागर में डूबे बिना न रहोगे। अंडे से निकलने के बाद मेंढक कई तरह के रूप धारण करता है। तब वह अपनी असली शक्ल में आता है। इस प्रकार मेंढक एक बड़ा अद्‌भुत जीव है।

क्या कहा ? 'साँप !'

'जी हाँ !'

नहीं शान्ता। तुम बड़ी पगली हो। यह केंचुआ है। यह देखो खुरपी से मैं तुम्हें और खोद कर दिखाता हूँ।

'ओहो ! ये तो बहुत से हैं !'

"हाँ, बहुत से हैं। वर्षा के आगमन पर जितने जीव नजर आते हैं, उनमें यह केंचुआ मुझे सब से अधिक विचित्र और रहस्यमय जान पड़ता है। मेंढक के बाद वर्षा का यह एक प्रमुख जीव है। इनको धीरे-धीरे रेंगते और कुलबुलाते देखकर मुझे ऐसा मालूम होता है मानों मिट्टी के भीतर छिपी हुई जिन्दगी धीरे-धीरे करवटें लेकर जाग रही है।

यह देखो, यह केँचुआ किस प्रकार कुलबुला रहा है। यह जमीन के अन्दर जाना चाहता है। क्योंकि प्रकाश उसे पसन्द नहीं। वह प्रकाश सहन नहीं कर सकता। और यह देखो, हाथ लगाने से किस प्रकार सिकुड़ जाता है। इसकी चाल भी बड़ी विचित्र है। यह बिलकुल साँप की तरह रेंगता है। इसलिए बड़े आकार के केँचुए को देखकर अकसर लोगों को साँप का भय हो जाता है। पर असल में कुछ साँप बिलकुल केँचुए की तरह होते हैं। परन्तु साँप की चाल बहुत तेज होती है। इसलिए केँचुए और साँप में बहुत कम धोखे की गुंजाइश है।

वर्षा के बाद केँचुए फिर नजर नहीं आते। वे धरती के भीतर बहुत गहरे जाकर छिपे पड़े रहते हैं। परन्तु वर्षा का प्रारम्भ होते ही मानों वे नींद से जाग उठते हैं। उस समय वे एक दो की तादाद में नहीं, बल्कि लाखों की तादाद में जमीन के भीतर पैदा हो जाते हैं। कभी-कभी तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि इतने अधिक केँचुए जमीन के भीतर आये कहाँ से।

परन्तु वे न तो आसमान से बरसते हैं, और न जमीन के भीतर से अपने आप पैदा होते हैं। बल्कि जो केँचुए जमीन के भीतर मौजूद होते हैं, उनके अंडों से ही और नये केँचुए पैदा होते हैं। मादा मेंढक की तरह केँचुए भी एक साथ काफी अंडे देता है। वर्षा

में मानो उसका और कोई काम ही नहीं होता। खाना और अडे देना यही मानों उसके जीवन के उद्देश्य हे। मेढक का भी यही हाल है। वर्षा में नर और मादा मेढक जागते हैं, असंख्य बच्चे पैदा करते हैं और फिर सो जाते हैं। अच्छा, यदि मेढक के इतने बच्चे न हों तो क्या हो ?"

'सब मेढक जरूर दुनिया से नष्ट हो जॉय।'

"बिलकुल ठीक कहते हो सन्नू। अपने वश की रक्षा के लिए मेढक इतने अडे देता है। अथवा यह कहना चाहिए कि प्रकृति का ऐसा ही प्रबन्ध है। मेढक आदि चूँकि निबल जीव हैं, इसलिए प्रकृति ने उनको ऐसा बनाया है कि वे एक साथ बहुत से अडे देते हैं, ताकि उन अडों मे से निकले हुए बच्चे, मरने, खपने और तरह-तरह के सकटों का सामना करने के बाद कुछ न कुछ जरूर बाकी बच रहें।"

"नहीं, नहीं! मैं इधर-उधर की बात नहीं कह रहा हूँ, शान्ता! मैं तुम्हें 'जीवन की कहानी' सुना रहा हूँ। परन्तु शुरू की बात जब तक पूरी न हो, तब तक मैं आगे कैसे बढ़ूँ ? कहानी तो शुरू से आखिर तक पूरी ही सुनायी जायगी।"

अच्छा अब मैं माली से बीज के वह बक्स मँगवाता हूँ जो मैंने तुम्हारे लिए तैयार किये हैं। उनमें तुम लोग अपने अपने बीज बोना।

'हाँ शान्ता ! तुम खीरा का बीज बोओगी। तुम सेम बोना। तुम मटर बोना। मैं भी कुछ बीज बोऊंगा। हम देखेंगे किसके बीज पहले उगते हैं। तब तक तुम लोग इस क्यारी को देखो।

यह देखो तुरैया का बीज धरती को फोड़कर बाहर निकल आया है। बीज के ऊपर जो काला छिलका होता है, उसका मुँह नीचे की तरफ से खुल गया है और उसके भीतर दो हरी पत्तियाँ साफ नजर आ रही हैं। कल तक पत्तियाँ कुछ बड़ी होंगी। छिलका तब गिर जायगा और पौधे की दो पत्तियाँ और भी नजर आने लगेंगी।

यह खीरा भी उग आया है! यह चना उग रहा है। मक्का का बीज अभी अंकुरित नहीं हुआ। मक्का देर से निकलती है। उसे हम कल देखेंगे।

हाँ, यह तितली है। अपने बगीचे में पीले रँग की तितलियाँ बहुत हैं। कितनी खूबसूरत हैं! साथ ही इनका जीवन भी बड़ा विचित्र है।'

परन्तु इस समय हम लोग घर चलेंगे। सन्ध्या हो रही है, और पिताजी तुम लोगों की प्रतीक्षा कर रहे होंगे।

—

दूसरा अध्याय

वृक्ष के छोटे बच्चे

वक्सों के बीज अभी नहीं उगे। उन्हें हम बाद में देखेंगे। आओ, पहले उस क्यारी के पास चलें।

क्यारी में आज कुछ और बीज उग आये हैं। कल जहाँ कुछ नजर नहीं आ रहा था, वहाँ आज नये पौधे उगते दिखायी दे रहे हैं। उनमें से कुछ तो धरती को फोड़ कर बाहर निकल आये हैं। और कुछ बाहर निकलने का प्रबन्ध कर रहे हैं। यह देखो सन्तू, मटर का बीज किस प्रकार धरती फोड़ कर बाहर निकलना चाहता है। बीज के भीतर से एक डंठल बाहर निकला है, जो धरती के भीतर चला गया है। डंठल के सहारे अब बीज ऊपर उठने का प्रयत्न कर रहा है।

'और यह देखिये, सेम का बीज उग आया है।'

'तुम ठीक कहती हो, शान्ता। देखो सन्तू, क्यारी के उस कोने में सेम का बीज किस तरह उग रहा है। डंठल के ऊपर

बीज के जो दो दल हैं उन्होंने अपना मुँह खोल दिया है। और उनके बीच में से एक हरा अंकुर बाहर निकल रहा है।

और देखो, कल जो पौधे छोटे नजर आते थे वे आज कुछ चढ़ गये से जान पड़ते हैं। क्यों न शान्ता ? लौकी के दोनों पत्ते कल आपस में जुड़े हुए थे, और उन पर एक छिलका चढ़ा हुआ था। पत्तों के फैलने की वजह से वह छिलका आज दूर हो गया है। वह पौधे के पास ही पड़ा है। यह देखो सन्तू, यह लौकी के बीज के ऊपर का छिलका है।

'और उसके भीतर जो मिँगी होती है वह कहाँ गयी ?'

'वह मिँगी ! उसने इन दो पत्तों का रूप धारण कर लिया है। यह देखो मेरी जेब में लौकी का बीज है। मैं तुम्हें छील कर बताता हूँ। यह उसके ऊपर का छिलका है। यह मिँगी है। खीरा, कद्दू, लौकी, तरबूज आदि के बीजों में इसी प्रकार की मिँगी निकलती है। यह बीच से जुड़ी हुई होती है और दबाने से खुल कर अलग हो जाती है। इसी प्रकार यदि तुम भीगे चने को दबाओ तो उसके दो देवल अलग-अलग हो जाते हैं। अन्तर केवल इतना है कि देवल मोटे और भारी होते हैं और कद्दू या लौकी की मिँगी के दल हलके और पतले।

'तो क्या मिँगी के इन दो दलों से ही ये पत्ते बने हैं ?'

हाँ, मिंगी के इन दलों से ही पत्ते बने हैं। मिंगी के भीतर से ही डंठल का यह नीचे का हिस्सा निकला है जो धरती के भीतर धँसता चला गया है और जिससे जड़ बनी है। डंठल भी कल की अपेक्षा आज कुछ बढ़-सा गया है। कल की अपेक्षा वह आज धरती से कुछ अधिक ऊँचा उठा नजर आ रहा है। और इन दो हरे पत्तों के बीच में से ऊपर की ओर एक कोंपल निकल रही है। आज की अपेक्षा कल यह कुछ अधिक बड़ी हो जायगी। वास्तव में यह लौकी का नया पत्ता है। यह धीरे-धीरे बड़ा होगा। इसके डंठल से फिर नयी कोंपलें फूटेंगी। उनसे नये पत्ते और शाखें बनेंगी। इस तरह पेड़ धीरे-धीरे बढ़ेगा। बढ़ कर वह कुछ दिनों में उतना ही बड़ा हो जायगा जितना बड़ा तुम लौकी की बेल का वह पेड़ देख रहे हो। माली ने उसे आज से एक महीने पूर्व बोया था। एक महीने में वह इतना बड़ा हो गया है। यह लौकी की बेल भी बढ़ कर इतनी ही हो जायगी।

इसी प्रकार यह खीरा भी बढ़ेगा। यह सेम भी बढ़ेगी। यह भिंडी भी बढ़ेगी। इसमें फिर फूल लगेंगे। फूल से फल होंगे। फल में बीज उत्पन्न होंगे। उन बीजों से और फल तैयार किये जा सकते हैं। यह कितना विचित्र और अद्भुत है! जमीन में बीज बो देने से वह बढ़ने लगता है। बढ़ते-बढ़ते वह

एक वृक्ष बन जाता है। इसमें हमें कोई विचित्रता नहीं जान पड़ती। क्योंकि यह व्यापार हम रोज देखते हैं। किसान खेत में बीज बो देता है। उससे असंख्य नये बीज पैदा हो जाते हैं। किसान को इसमें कोई आश्चर्य नहीं होता। क्योंकि उसने जान रक्खा है कि यह ऐसा ही होता है।

खेत में गेहूँ बोने से गेहूँ के और नये पौधे पैदा हो जाते हैं। परन्तु यह किस प्रकार होता है, बीज बो देने से किस प्रकार वह एक वृक्ष बन जाता है, और किस प्रकार उस वृक्ष में फिर और नये बीज पैदा होते हैं, यह एक बड़ी अद्भुत कहानी है। यह प्रकृति की एक महान् आश्चर्यजनक घटना है; उतनी ही आश्चर्य-जनक जितनी कि मा के गर्भ से बालक का जन्म होना।

जरा सोचो तो कि बीज के भीतर वृक्ष कहाँ छिपा रहता है और जमीन में बो देने से वह किस तरह धीरे-धीरे बढ़ने लगता है, और एक विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लेता है। इतना ही नहीं, बल्कि उस वृक्ष में फूल लगते हैं, और नये-नये फल पैदा होते हैं। इसमें तुम्हें क्या कोई विचित्रता नजर नहीं आती, सन्तू ?

बीजों को हम वृक्ष की सन्तान कह सकते हैं। बीज वृक्ष के छोटे बच्चे हैं, जो अनुकूल वातावरण पाकर धीरे-धीरे बढ़ने लगते

हैं। यदि मैं आमकी यह गुठली जमीन में गाड़ दूँ और उसे रोज पानी से सींचता रहूँ, तो उसमे अकुर फूट निकलेगा। उस अंकुर से पहले एक पौधा बनेगा। वह पौधा धीरे-धीरे बढ़ता जायगा। जिस तरह कि तुम लोग बढ़ रहे हो, क्यों न शान्ता ? और एक दिन यह पोधा पूरा वृत्त बन जायगा। जिस तरह एक दिन तुम लोग भी अपनी बहन की तरह वयस्क बनोगे।' परन्तु क्या तुम्हें याद है कि एक दिन तुम लोग अपने भाई की तरह ही छोटे और निर्बल थे। उस समय मा तुम्हे हमेशा छाती से लगाये रहती थीं, या पालने में सुला देती थीं। उस समय तुम आज कल की तरह दाल, भात या तरकारी नहीं खा सकते थे। तुम केवल मा का दूध पीते थे, जिस प्रकार तुम्हारा छोटा भाई अभी पीता है। यह दूध तुम्हारे लिए मा के स्तनों में विशेष रूप से तैयार होता था।

जरा उस समय का खयाल तो करो। तुम कितने छोटे और कमजोर थे ! न बोल सकते थे। न चल सक्ते थे। न स्वयम् कोई काम कर सकते थे। इसलिए मा तुम्हें गरम कपडों से ढक कर रखती थीं, कि कहीं सरदी न लग जाय। हर समय उन्हे तुम्हारी देख भाल करनी पडती थी। परन्तु इसके पूर्व तो तुम और भी छोटे और कमजोर थे—इतने छोटे और कमजोर कि बाहर की सरदी और गरमी तुम बर्दाश्त नहीं कर सकते थे ! इसलिए

उस समय मा ने तुम्हें अपने गर्भ में रक्खा। मा के गर्भ में तुम बड़े मजे में थे। वहाँ तुम्हारे सुख के सब साधन मौजूद थे। सेम के इस बीज की तरह ही तुम अपनी मा के गर्भ में आराम से बन्द थे।

शान्ता मेरी ओर आश्चर्य से देख रही है! सन्तू भी तो मानो कुछ पूछना चाहता है। और मन्तू तो बिलकुल ही गुमसुम है। तुम शायद सोच रहे हो कि मैं क्या से क्या कहने लगा हूँ?

यह देखो मेरे पास सेम की एक फली है। इसके भीतर सेम के छः बच्चे आराम से पड़े सो रहे हैं। ऊपर से मानो यह गरम कम्बल ओढ़े हैं कि कहीं सरदी न लग जाय। ये सेम के बच्चे हैं। मा के गर्भ में तुम भी इसी प्रकार आराम से बन्द थे। और एक दिन तुम इतने ही छोटे भी थे।

'इतने छोटे!'

'हाँ! बल्कि इससे भी छोटे।' पोस्त के दाने के जितने छोटे!'

एक दिन तुम पोस्त के दाने से भी छोटे थे। इतने छोटे कि तुम्हें आँख से देखना भी मुश्किल था। किन्तु अपनी मा के गर्भ

में तुम निरन्तर बढ़ते और सबल होते रहे और जब एक दिन संसार में आने के योग्य हुए तो मा के गर्भ से बाहर निकले और अपने माता-पिता की सन्तान कहलाये।

ये बीज भी इसी तरह अपने माता-पिता की सन्तान हैं। एक दिन ये भी अपनी मा के गर्भ में आराम से बन्द थे। और ये भी उसी तरह उत्पन्न हुए हैं जिस तरह हम, तुम और अन्य जीवधारी।

समझ रही हो न शान्ता? इसीलिए अपनी कहानी में वृक्षों को लेकर ही शुरू कर रहा हूँ। वृक्ष भी हमारी तरह ही जीवधारी हैं।

बीज हमें काठ की तरह निर्जीव दिखायी देते हैं। परन्तु वास्तव में ये सजीव पदार्थ हैं। इनके भीतर जीवन का स्पन्दन मौजूद है। यह सचमुच एक आश्चर्य की बात है। जीवन इनके भीतर कहाँ छिपा रहता है, कुछ पता नहीं चलता। फसल कट जाने के बाद गेहूँ, चना, मटर, सेम, ज्वार आदि के बीजों को हम बोरों में बन्द करके रख देते हैं। बोरों में वे बरसो तक ज्यों के त्यों बन्द पड़े रहते हैं। उनमें कोई परिवर्त्तन नहीं होता। परन्तु थोड़ी सी नमी और गरमी मिलने से ही वे बढ़ने लगते हैं। उनमें बढ़ने की यह शक्ति कहाँ से आती है? जड़ पदार्थों में तो यह शक्ति होती नहीं।

क्यों शान्ता, जमीन में यदि तुम कंकड़ पत्थर गाड़ दो तो क्या वे बीज की तरह बढ़ने लगेंगे?

'कंकड़ पत्थर भी कहीं बढ़ते हैं!'

ठीक कहती हो। कंकड़ पत्थर नहीं बढ़ते। बढ़ने की यह शक्ति सजीव पदार्थों में ही होती है। बीजों में यह शक्ति मौजूद है। वे बढ़ते हैं। इसीलिए वे सजीव हैं।

बीज की साधारण अवस्था में उसकी बढ़ने की यह शक्ति कहाँ छिपी रहती है, यह एक रहस्य है। तुम जानते हो कि सोते समय हमारे सब काम बन्द रहते हैं। खाना-पीना, चलना-फिरना, सब बन्द हो जाता है। साँस अवश्य चलती रहती है और आँख खुलने पर हम जाग उठते हैं।

ठीक इसी तरह बीज के भीतर भी बढ़ने की यह शक्ति चुपचाप पड़ी सोती रहती है और अनुकूल अवसर पाने पर जाग उठती है।

वृक्ष हमारी तरह साँस लेते हैं। मैं तुम्हें यह सिद्ध करके दिखा सकता हूँ। यह कार्य वे पत्तियों द्वारा करते हैं। पत्तियों में असंख्य छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। इन छिद्रों द्वारा वे हमारी तरह ही हवा में से आक्सीजन खींचते हैं। आक्सीजन गैस तो तुम जानते हो न सन्तू ? साथ ही हवा में से वे कार्बन डाय-आक्साईड नाम की एक गैस और भी खींचते हैं। इस गैस तथा पानी की सहायता से पत्तियों के भीतर वृक्ष के लिए भोजन तैयार होता है।

वृक्ष हमारी तरह भोजन नहीं करते, यह ठीक है। हम मुँह से खाते हैं। परन्तु वृक्ष अपना भोजन जड़ो और पत्तियों से चूसते हैं। वे पानी पीते नहीं बल्कि चूसते हैं।

किन्तु ये दोनों ही चीजें अर्थात् भोजन और पानी उनके लिए उतनी ही आवश्यक हैं जितनी हमारे लिए। छोटे पौधों को रोज पानी से सींचना पड़ता है। पानी न मिलने से वे कुम्हला जाते हैं। तुम यह बात अच्छी तरह जानते हो इसी तरह पोषण के लिए वृक्षों को भोजन चाहिए। उचित भोजन न मिलने से उनकी वृद्धि नहीं होती।

परन्तु वृक्ष ठोस पदार्थ नहीं खा॰ सकते। मिट्टी में मिले हुए पोषक तत्व जब पानी में घुल जाते हैं तभी वे जड़ों द्वारा उनका उपयोग कर पाते हैं। वृक्षों को इसी लिए पानी की इतनी आवश्यकता होती है।

इस प्रकार वृक्ष हमारी तरह साँस लेते हैं। हमारी तरह खाते पीते हैं। वे हमारी तरह विश्राम भी करते हैं।

सन्ध्या के उपरान्त सभी वृक्ष अपना काम बन्द कर देते हैं। अधिकांश वृक्षों की पत्तियाँ शिथिल होकर झुक जाती हैं। जिससे प्रकट होता है कि वृक्ष अन्य जीवों की तरह विश्राम भी करते हैं।

और वृक्ष यद्यपि चलते फिरते नहीं, वे एक स्थान से दूसरे स्थान को नहीं जा सकते; परन्तु फिर भी वे अपने हाथ पैर हिलाते हैं। वृक्ष हवा से हिलते हैं। वह बिलकुल दूसरी बात है। परन्तु आवश्यकता पड़ने पर वे अपनी पत्तियों और टहनियों को इच्छानुसार मोड़ सकते हैं। ओह! इतना ही क्यों। मैं तुम्हें अभी दिखा सकता हूँ कि वे सचमुच किस तरह अपने हाथ पैर मोड़ते हैं।

तुरई की इस छोटी बेल को देखो। वह किस तरह लकड़ी के सहारे ऊपर चढ़ रही है। उसमें से जगह-जगह सूत की तरह के लम्बे और बारीक तन्तु फूट रहे हैं। कुछ तो हवा में लहरा

रहे हैं, मगर कुछ ऐसे हैं जिन्होंने मजबूती से लकड़ी को पकड़ रक्खा है। वास्तव में इन तन्तुओं में यह गुण होता है कि इन्हें जहाँ जो चीज़ मिलती है उससे ही लिपटना शुरू कर देते हैं और इतनी मजबूती से लिपटते हैं कि उन्हें तुम आसानी से छुड़ा नहीं सकते। इस तरह तुरई, लौकी या खीरा की तरह के अधिकांश पेड़ आस पास की चीजों को इन तन्तुओं के ज़रिए पकड़-पकड़ कर ऊपर चढ़ते हैं। जिन वृक्षों के तने कमज़ोर होते हैं और सीधे खड़े नहीं रह सकते वे सब इसी प्रकार ऊपर चढ़ते हैं।

वृक्षों में अपने अंगों को मोड़ने की शक्ति है, इसका यह एक साधारण उदाहरण है।

इतना ही नहीं, बल्कि तुम्हें यह सुनकर आश्चर्य होगा कि चोट लगने से वृक्षों को हमारी तरह ही पीड़ा होती है। कुछ वृक्ष तो इतने सुकुमार होते हैं कि उंगली का स्पर्श तक सहन नहीं कर सकते। कोई उन्हें छेड़े, उन्हें यह बात पसन्द नहीं।

शान्ता मेरी ओर देख रही है। वह यह बात जानती है। क्यों शान्ता ? और तुम लोग भी जानते हो। इधर कई दिन से शान्ता ने अपना छुईमुई का पेड़ नहीं देखा। उसे वह भूल गयी है। उँगली छुआते ही वह किस तरह अपनी पत्तियाँ सिकोड़ लेता है, यह बात तुम रोज़ देखते हो। छुईमुई का पेड़ मानो हमसे कहता है, 'मुझे व्यर्थ मत छेड़ो। छूने से मुझे कष्ट होता है।'

वास्तव में किसी पैनी चीज़ का एक हलका सा घाव लगने पर भी वृक्षों को पीड़ा होती है। इस प्रकार वृक्षों में जीवन के सभी लक्षण मौजूद हैं। वे अन्य जीवों की तरह अपनी वंश-वृद्धि भी करते हैं। वास्तव में जीव का एक लक्षण ही यह है कि वह अपनी जाति के अन्य जीवों की सृष्टि करता है। तुम किसी ऐसे जीव की कल्पना नहीं कर सकते जिसमें यह गुण मौजूद न हो। जीव को भोजन की जितनी आवश्यकता होती है उतनी ही आवश्यकता उसे इस बात की भी होती है कि वह अपनी जाति के अन्य जीवों की सृष्टि करे। खाने की इच्छा की तरह सन्तानोत्पत्ति की लालसा भी स्वाभाविक रूप से सब जीवों में मौजूद रहती है।

फिर भी जिस अर्थ में हम चलते-फिरते हैं, वृक्ष उस अर्थ में एक स्थान से दूसरे स्थान को नहीं जाते। कुत्ते में और एक नीम के वृक्ष में जो अन्तर है उसे हम बहुत अच्छी तरह जानते हैं। इसलिए सुविधा के लिए जीव-जगत को दो भागों में बाँट दिया गया है। एक तो चर जीव, और दूसरे अचर जीव।

वृक्ष अचर जीव हैं, अर्थात् ऐसे जीव जो चलते नहीं।

———

चौथा अध्याय

बीज के अंग प्रत्यंग

वृक्ष सजीव प्राणी हैं और बीज उनके छोटे बच्चे हैं, यह तुम समझ गये। मेरे लिए वृक्ष के एक बीज और चिड़िया के अंडे में विशेष अन्तर नहीं है। अंडे के भीतर से जैसे चिड़िया का बच्चा निकलता है, और बढ़ता है, और बढ़कर फिर एक बड़ा पक्षी बन जाता है, उसी तरह बीज के भीतर से एक पौधा निकलता है और बढ़ता है, और बढ़कर एक पूरा वृक्ष बन जाता है।

वृक्षों के भीतर उनके ये बच्चे किस प्रकार उत्पन्न होते हैं, यह बताने के पूर्व मैं तुम्हें उनकी बनावट के विषय में कुछ आवश्यक बातें और बता देना चाहता हूँ।

मेरे पास ये कुछ भीगे चने हैं। इन्हें मैंने रात को पानी में भिगो दिया था। भीगने से वे फूल गये हैं। पहले वे सूखे या सिकुड़े हुए थे; परन्तु अब भरे हुए जान पड़ते हैं। और उनका रंग भी कुछ बदल गया है।

दबाने से अब इनका छिलका आसानी से अलग हो जाता है। तुम देखोगे कि इस छिलके के भीतर एक और बारीक सफेद सा छिलका है। उसके भीतर पीले रंग के दो मोटे दाने हैं। इन दानों से तुम अच्छी तरह परिचित हो। इनको देवल कहते हैं। इनसे चने की दाल बनती है। क्यों न शान्ता ?

दबाने से ये देवल अलग हो जाते हैं। और इन दोनों के बीच में, जहाँ ये जुड़े हुए हैं, वहाँ एक छोटी सी चीज नजर आ रही है। उसका एक हिस्स तो चने के बाहर निकला है, जिससे चने की नोक बनी है और बाकी हिस्सा चने, के भीतर छिपा हुआ है। जानते हो, यह क्या चीज है ? यह चने का नन्हा पौधा है।

ऊपर—१. बीजपत्र, २. भ्रूण मुकुल, ३. भ्रूण मूल
नीचे—चने का अंकुरित होता हुआ बीज।

यह चने का पौधा है !

हाँ ! यह चने का पौधा है। इसे हम *शिशु-वृक्ष* कह सकते हैं। और ये मोटे दाने भी वास्तव में इसके एक अंग हैं। ये पौधे की

प्रारम्भिक पत्तियाँ हैं। इसलिए हम इनको *बीज-पत्र* कह सकते हैं। शिशु वृक्ष दोनों तरफ इन बीज-पत्रों से जुड़ा हुआ है। अथवा बीज-पत्र इस शिशु-वृक्ष से दोनों तरफ जुड़े हुए हैं। यह एक ही बात है।

इस नन्हे से पौधे का जो नुकीला हिस्सा बाहर की तरफ निकला हुआ है, यह पौधे की जड़ है। बीज के उगने पर यह नीचे की तरफ बढ़ती है। इसे हम *भ्रूण-मूल* कह सकते हैं।

मा के गर्भ मे जो बालक होता है उसकी प्रारम्भिक अवस्था को भ्रूण कहते हैं। यह छोटा पोधा भी अभी मा के गर्भ में है। अभी उसके अंग-प्रत्यंग विकसित नहीं हुए हैं।

और यह ऊपर का बीज-पत्रों से ढका हुआ और कुछ चौड़ा सा जो अंश है, यह पौधे का वह अंग है, जो बीज के उगने पर ऊपर की ओर बढ़ता है। इसे हम *भ्रूण-मुकुल* कह सकते हैं। मुकुल का अर्थ है पेड़ की वह उगती हुई फुनगी जो कि बढ़ कर टहनी और पत्ती का रूप धारण करती है।

मटर, सेम, कद्दू, खीरा आदि मे तुम सूक्ष्म रूप मे इस नन्हे से वृक्ष को देख सकते हो। इन सब मे दो बीज-पत्र होते हैं। और ऊपर एक मजबूत छिलका होता है। ये सब बीज रूप रंग में अवश्य एक दूसरे से भिन्न होते हैं, परन्तु उन सब मे

अंग-प्रत्यंग वही होते हैं। सबके दो बीज-पत्र होते हैं। और बीज-पत्रों के भीतर शिशु-वृक्ष छिपा रहता है।

परन्तु मक्का या गेहूँ के दो बीज-पत्र नहीं होते। इनको तुम बीच से फोड़ कर दो नहीं कर सकते। ऐसी दशा में शिशु-वृक्ष बीच मे न होकर बीज में कहीं एक तरफ होता है, और बाकी जगह में एक सफेद सा पदार्थ भरा रहता है। इनके अंकुरों मे भी फर्क होता है जैसा कि कल तुमने स्वयम् देखा था।

शान्ता की वह क्यारी मुझे बहुत पसन्द है, जिसमें उसने मटर, सेम, मक्का, गेहूँ, चना, खीरा आदि के बीज एक साथ ही बो रक्खे हैं। किसी को इस बात का अध्ययन करना हो कि तरह-तरह के बीज किस तरह उगते हैं तो वह शान्ता की क्यारी के पास जा सकता है। क्यों न शान्ता ?

यह देखो, चने के बीज-पत्र जमीन के भीतर ही रह गये हैं, और भ्रूण-मुकुल बढ़कर बाहर निकल आया है। मगर सेम और मटर के बीज-पत्र डंठल के साथ बाहर निकले हुए हैं। उनके ऊपर का छिलका जमीन मे ही रह गया है। मुँह खुले हैं, और उनमें से डंठल के साथ पत्तियाँ बाहर निकल रही हैं। यह भ्रूण-मुकुल है जो कि बढ़ने की तैयारी कर रहा है।

कुछ पौधों में तो पत्तियाँ निकल भी आयी हैं, और कुछ काफी बड़े हो गये हैं। पौधे जैसे-जैसे बढ़ रहे हैं, बीज-पत्र वैसे ही वैसे सिकुड़ते जाते हैं। देखते हो न सन्तू ?

"जी हाँ, और यह देखिये. इस पौधे के बीज-पत्र तो बिलकुल ही सूख गये हैं, और नीचे गिरने की तैयारी कर रहे हैं।"

हाँ, ठीक कहते हो। इस पौधे को अब बीज-पत्रों की आवश्यकता नहीं। बीज-पत्रों का कार्य खतम हो गया है। पौधा अब बिना बीज-पत्रों के जीवित रह सकता है। वह अब जमीन के भीतर से स्वयम् भोजन ग्रहण करने के योग्य हो गया है।

और तुरई के बीज-पत्रों को देखो! बढ़कर सचमुच ही दो पत्तों के समान हो गये हैं। मटर, या सेम के बीज-पत्र इस प्रकार बढ़कर पत्तों का रूप धारण नहीं करते। कुछ दिनों में तुरई के ये बीज-पत्र भी सूख कर गिर जायेंगे।

किन्तु मक्का और गेहूँ के पौधे बिलकुल ही दूसरी तरह के नजर आ रहे हैं। दो पत्तों की जगह उन में घास की तरह के सीधे अंकुर निकल रहे हैं। शान्ता तो कल कह ही रही थी कि वे घास की तरह नजर आते हैं। वास्तव में वे घास की एक किस्म हैं। घास की किस्म के सब पौधे इसी प्रकार उगते हैं। उनमें एक बीज-पत्र होता है और वह जमीन के अन्दर रहता है।

इसलिए मका, गेहूँ, धान, ज्वार आदि को एक-पत्री बीज कहते हैं और मटर, सेम, कद्दू, लौकी, खीरा आदि द्विपत्री-बीज कहलाते हैं। यह देखो सन्तू, मैंने गेहूँ का एक पौधा उखाड़ लिया है। तुम देखोगे कि गेहूँ ज्यों का त्यों है। वह बीच से दो नहीं हुआ। अंकुर उसे बीचों बीच से फोड़कर बाहर नहीं निकला। बल्कि उसके एक सिरे से बाहर निकला हुआ है। और उसी जगह से यह जड़ भी नीचे की तरफ गयी है

मका का बीज

और यह जो बीज है वह इस समय यद्यपि तुम्हें फूला हुआ और सख्त दिखायी पड़ता है, परन्तु ज्यों-ज्यों पौधा बढ़ेगा, त्यों-त्यों वह वजन में कम होता जायगा, यहाँ तक कि एक दिन छिलका मात्र रह जायगा।

मटर, सेम, लोबिया आदि के पौधों में तुम यह स्पष्ट देख रहे हो। पौधों के बढ़ने के साथ ही बीज-पत्र सूखते जा रहे हैं। ऐसा क्यों होता है? ये बीज-पत्र किसलिए हैं? मैं तुम्हें बतलाता हूँ।

इन बीज-पत्रों के भीतर नन्हे से पौधे के लिए भोजन सुरक्षित रहता है। पौधा जब तक बढ़ नहीं जाता और उसकी जड़ें जब तक जमीन के भीतर से स्वयम् भोजन ग्रहण करने योग्य नहीं हो जातीं, तब तक वह बीज-पत्रों के आधार पर जीवित

रहता और बढ़ता है। बीज-पत्र तब तक उसे भोजन पहुँचाते हैं। बीज-पत्रों के बिना शिशु वृक्ष बढ़ नहीं सकता। सेम के बीज-पत्रों को अलग करके यदि तुम केवल अँखुआ बो दो तो वह बढ़ेगा नहीं। अतएव बीज के भीतर केवल शिशु-वृक्ष ही नहीं होता, बल्कि उसके लिए वहाँ भोजन का भी समुचित प्रबन्ध रहता है।

तुम्हारा भैया अभी बहुत छोटा है। वह ऊपर की कोई चीज़ नहीं खा सकता। इसलिए प्रकृति ने उसकी माँ के स्तनों में दूध पैदा किया है। वह केवल दूध पीता है। इसी प्रकार बीज के भीतर यह जो शिशु वृक्ष है वह अभी अपने आप ज़मीन के भीतर से भोजन का रस ग्रहण नहीं कर सकता। इसलिए प्रकृति ने बीज-पत्रों के रूप में उसके लिए भोजन सामग्री एकत्र कर दी है। शुरू में पौधे इस सामग्री के आधार पर ही जीवित रहते और बढ़ते हैं। ज्यों-ज्यों पौधा बढ़ता है, त्यों-त्यों बीज-पत्र सिकुड़ते जाते हैं। इसका मतलब यही है कि बीज-पत्रों के भीतर जो सार-अंश है उसका उपयोग हो रहा है। और जब उसका पूरा उपयोग हो चुकता है तो अन्त में एक दिन बीज-पत्र सूख सूख कर गिर जाते हैं। उनके भीतर की सारी भोजन-सामग्री पौधे के शरीर-निर्माण के काम आ जाती है। तब तक पौधा भी अपने आप ज़मीन से भोजन ग्रहण करने के योग्य हो जाता है।

इतना ही नहीं। एक और अजीब बात है। इन बीज-पत्रों के भीतर जो सार-अंश होता है, और जिस के आधार पर ये शिशु-वृक्ष शुरू में जीवित रहते और बढ़ते हैं, वह ठीक वही पदार्थ है जिसे हम चावल के रूप में नित्य ग्रहण करते हैं। जो चीज इन बीज-पत्रों में होती है वही चावलों में भी है। इस प्रकार तुम देखोगे कि हमारे और इन नन्हे पौधों के भोजन में भी कोई अन्तर नहीं है। जो हम खाते हैं वही ये नन्हे पौधे भी खाते हैं। कितनी बातों में वे हम से मिलते हैं! इसलिए वृक्ष के इन बच्चों को अब इतना तुच्छ और साधारण समझने की जरूरत नहीं है जितना कि तुम समझते रहे हो। उन में और हम में विशेप अन्तर नहीं है। वे हमारी तरह ही चेतन प्राणी हैं। छोटे और नासमझ और मुँह से न बोलने वाले! मैं चाहता हूँ कि इन बीजों को तुम आज से एक दूसरी ही दृष्टि से देखना शुरू करो। न केवल तुम उनकी बनावट पर आश्चर्य करो, न केवल उनकी प्रत्येक रग में जीवन को स्पन्दित होते हुए देखो, न केवल उनमें तुम प्रकृति

गेहूँ का दाना

१—ऊपर का छिलका

२—भोजन-सामग्री

५—भ्रूणमुकुल
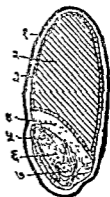
७—भ्रूण-मूल

की अद्भुत लीला और कार्य-पटुता के दर्शन करो, बल्कि मैं चाहता हूँ कि जब कभी तुम उन्हें हाथ में लो तो इस बात

मक्का का पौधा   धान का पौधा   मक्का का भुट्टा

का ख्याल रक्खो कि बेकार दबाने या कुचलने से उन्हें तक्लीफ होती है।

पाँचवाँ अध्याय

वंश-वृद्धि के कुछ तरीके

क्या तुम जानते हो आलू किस प्रकार पैदा होता है ?

परन्तु मैं तुम्हें यह बताना चाहता हूँ कि जिसे हम आलू का बीज कहते हैं वह वास्तव में बीज नहीं है। बल्कि आलू का मोटा और गोल डंठल है, जो बाहर न आकर जमीन के भीतर रहता है। इस मोटे और गोल डंठल के भीतर आलू की पत्तियों और शाखों के लिए भोजन संगृहीत रहता है।

तो हम जिस आलू की तरकारी खाते हैं वह आलू का बीज नहीं है ?

नहीं। वह आलू का बीज नहीं है। इसी प्रकार अदरक की गाँठ भी अदरक का बीज नहीं है। हलदी भी हलदी का बीज नहीं है। ये चीजें अपने नाम के उस वृक्ष का एक अंग मात्र हैं।

मेरे पास एक आलू है और अदरक की एक गाँठ भी, जिसे मैं बगीचे से खोद कर लाया हूँ।

यह देखो, इस आलू में कई छोटे-छोटे गड्ढे हैं। ये गड्ढे सब आलुओं में होते हैं। किसान इन्हें आलू की *आँख* कहते हैं। यदि हम इस आलू को इस तरह से काटें कि हर टुकड़े में एक आँख बनी रहे, और उन टुकड़ों को खदीलो जमीन में गाड़ दें, तो वे अंकुरित हो उठेंगे। उनसे आलू के पौधे उत्पन्न होंगे। और उन पौधों की जड़ में वैसे ही आलू लगेंगे जैसे हम रोज देखते हैं और जिनका एक टुकड़ा हमने बोया था।

आलू बोने के इस तरीके को किसान अच्छी तरह जानते हैं। उन्हें जिस किस्म के आलू बोने होते हैं, पूर्ण विश्वास के साथ वे खेत में उसी प्रकार के आलू बो देते हैं। आलू यदि छोटे हुए तो उनके टुकड़े करने की जरूरत नहीं होती। बोने के तीन चार महीने बाद खेत में आलू उत्पन्न हो जाते हैं।

इसी प्रकार अदरक की गाँठ का अंकुरित हो उठना भी एक साधारण बात है। अदरक को तुम कहीं भी मुलायम और गीली जमीन में गाड़ दो, वह अंकुरित हो उठेगा। उसकी पत्तियाँ बाहर निकल आयेंगी और डंठल भीतर ही भीतर बढ़ने लगेगा। अदरक की यह गाँठ अदरक का बीज नहीं है। बल्कि अदरक के गठीले और मोटे डंठल का एक अंग है। किसान को जब खेत में अदरक बोना होता है तब वह अदरक की गाँठ के इन टुकड़ों को खेत में छोड़ देता है। उनसे और अदरक पैदा हो जाता है। अदरक पैदा

करने के लिए अदरक के बीज की आवश्यकता नहीं होती। अद-रक के टुकड़ों से ही काम चल जाता है।

इसी प्रकार गुलाब के एक पेड से बहुत से पेड तैयार करने के लिए भी गुलाब के बीज की आवश्यकता नहीं होती। तुमने शायद माली को गुलाब की कलमें लगाते देखा होगा। गुलाब के एक पुराने पेड में से वह अच्छी मजबूत शाखें काटता है। पेड को इससे कोई हानि नहीं पहुँचती। इन शाखों को वह जमीन में गाड देता है और उनकी देखभाल करता रहता है। कुछ दिनों में इन शाखों से अंकुर फूट पडते हैं, पत्तें निकलते हैं और इस तरह गुलाब के नये झाड तैयार हो जाते हैं। गुलाब के इन नये वृक्षों में उस वृक्ष जैसे ही फूल खिलते हैं, जिसकी शाखों से वे तैयार किये गये हैं। और यदि गुलाब के दो ऐसे पेड हों, जिनमें से एक में लाल और दूसरे में सफेद फूल खिलते हों, और यदि हम इन दोनों की कलमे बाँध कर एक साथ जमीन में गाड दें, तो इस प्रकार जो गुलाब तैयार होगा उसमें एक विचित्र ही प्रकार के फूल खिलेंगे। उनकी पँखुरियाँ न तो बिलकुल लाल होंगी, और न बिलकुल सफेद ही। बल्कि उन पर लाल और सफेद रँग के धब्बे होंगे। क्या तुम इसका कारण बता सकते हो सन्तू ?

'पहले के उन दो वृक्षों ने इस नये वृक्ष के फूलों को अपना-अपना रूप, रँग और गुण दे दिया है।'

ठीक कहते हो। अच्छा क्या तुम हमें ऐसे कुछ और भी उदाहरण दे सकते हो जहाँ एक नये वृक्ष को पैदा करने के लिए बीज की जरूरत न पड़ती हो, बल्कि उस वृक्ष के अंश से ही काम चल जाता हो ?

शान्ता कुछ सोच रही है। वह कुछ बतायेगी।

अच्छा पोदीना किस प्रकार पैदा होता है, जानते हो ?

हाँ, हाँ, मैं जानती हूँ। पोदीना लगाने के लिए बीज की आवश्यकता नहीं होती। बल्कि पोदीने की एक मजबूत टहनी तोड़ कर जमीन में गाड़ देने से ही पोदीना लग जाता है।

ठीक है। ऐसी बहुत सी बेलें हैं जिनकी टहनी तोड़ कर जमीन में गाड़ देने से वे लग जाती हैं। रेल की स्टेशनों पर तुम जो बेल फैली देखते हो और जो तुम्हारे यहाँ भी मौजूद है, इस बात के लिए मशहूर है। इस प्रकार की एक बेल से अनेक बेलें पैदा की जा सकती हैं। अंगूर की बेल भी इसी प्रकार लगायी जाती है।

वंश-वृद्धि का यह एक साधारण तरीका है। तुम सूक्ष्म जीवों से परिचित हो। हैजा, प्लेग, मलेरिया आदि के कीटाणुओं का नाम तुमने सुना होगा। इन जीवों की तरह ही सूक्ष्म पौधे भी होते हैं। ये इतने सूक्ष्म होते हैं कि इनको मुश्किल से पौधा कहा जा सकता है। फिर भी वे वृक्ष की जाति के ही जीव हैं।

तालाब या पोखरों में तुमने काई जमी देखी होगी। यह एक प्रकार का पौधा है। परन्तु उसकी बनावट इतनी सूक्ष्म होती है कि उसका कोई रूप हमारी समझ में नहीं आता। इस पौधे की वंश-वृद्धि का तरीका भी बड़ा विचित्र है। एक पौधे में से एक नया अंकुर फूटता है। और वह अंकुर एक नया पौधा बन जाता है। उस पौधे में से फिर एक अकुर फूटता है। और वह एक नया पौधा बन जाता है।

सन्तू मेरी ओर देख रहा है। उसे कुछ सन्देह हो रहा है।

ये पौधे बहुत सूक्ष्म होते हैं, सन्तू! तालाब या नदी के तटों पर जो काई फैली होती है वह असंख्य छोटे-छोटे पौधों का समूह मात्र है।

इन उदाहरणों से यह बात तुम्हारी समझ मे आ गयी होगी कि एक नये वृक्ष को पैदा करने के लिए उस वृक्ष के एक अंश की आवश्यकता होती है। गुलाब की एक टहनी काट कर लगाने से गुलाब का एक नया वृक्ष पैदा हो जाता है। यह वृक्ष रूप और गुण मे अपनी उस माता के समान ही होता है जिसके एक अंग से उसका जन्म हुआ है।

क्यों शान्ता, तुम गुलाब के उस पेड़ को क्या कहोगी जिस की टहनी से एक नये वृक्ष का जन्म होता है? माता ही तो कहोगी न?

जैसा कि मैंने कहा है, एक वृक्ष के अंग-विभाजन द्वारा, अर्थात् उसके शरीर के टुकड़ों से उसी प्रकार के अन्य वृक्षों की सृष्टि होना, यह वंश-वृद्धि का एक सरल तरीका है। यह तरीका निम्न श्रेणी के छोटे पौधों और लता बेलों आदि में ही देखने में आता है। इन पौधों के शरीर की बनावट अन्य वृक्षों की अपेक्षा आसान होती है, और वंश-वृद्धि के काम के लिए उनके पास पूरी इन्द्रियाँ भी नहीं होतीं। इसलिए वे इस तरीके से अपनी वंश-वृद्धि करते हैं।

परन्तु अधिकांश वृक्ष ऐसे हैं, जिनकी वंश-वृद्धि का तरीका बड़ा जटिल है। इन वृक्षों की जड़ या टहनी को तुम चाहे जितनी होशियारी से काटकर जमीन में लगाओ, उनसे दूसरा वृक्ष उत्पन्न नहीं होगा। नीम की डाल से नीम का पेड़ उत्पन्न नहीं होगा। गेहूँ की डाल से गेहूँ उत्पन्न नहीं होगा। सेम या मटर की डाल से सेम या मटर उत्पन्न नहीं होगी। इनको उत्पन्न करने के लिए तो बीज की आवश्यकता होती है।

ये बीज वृक्ष के भीतर उत्पन्न होते हैं। उनके भीतर ही पलते-पोसते और बड़े होते हैं। और जब काफी बड़े और मजबूत हो जाते हैं तब पेड़ से अलग होकर अपनी नयी जिन्दगी शुरू कर देते हैं। इस प्रकार बीज को उत्पन्न करना ही वृक्ष का कार्य है। बीज को उत्पन्न करने के बाद वृक्ष का

वंश-वृद्धि का कार्य खतम हो जाता है और फिर अकसर वह सूख जाता है।

बीज को उत्पन्न करने के लिए वृक्षों में विशेष प्रकार की इन्द्रियाँ होती हैं। इन इन्द्रियों में विशेष प्रकार के कोष उत्पन्न होते हैं। वंश-वृद्धि करना ही इन कोषों का मुख्य कार्य है। वृक्ष के भिन्न-भिन्न अंगों के कोष भिन्न-भिन्न प्रकार का कार्य करते हैं। कुछ कोषों से पत्तियाँ बनती हैं जिनसे वृक्ष साँस लेते हैं, तो कुछ कोष ऐसे होते हैं जो केवल वंश-वृद्धि का कार्य करते हैं—अर्थात् बीज उत्पन्न करते हैं।

मैं तुम्हें अभी बताता हूँ कि यह कोष क्या चीज है।

छठा अध्याय

कोष

ईंटों से जैसे घर बनता है वैसे ही संसार के सब प्राणियों के अंग-प्रत्यंग छोटे-छोटे खंडों से मिलकर बनते हैं। इन खंडों को विज्ञान की भाषा में कोष कहते हैं। कोष अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। उन्हें तुम खाली आँख से नहीं देख सकते।

कोष जीवित पदार्थ हैं। उनमें जीवन होता है। हर एक कोष मानो एक जीवित प्राणी है। जीवित रहने के लिए उसे भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन न मिलने से वे नष्ट हो जाते हैं। कोष के भीतर *प्रोटोप्लाज्म* नामक एक प्रकार का सजीव पदार्थ होता है। इस पदार्थ को सजीव इसलिए कहा जाता है कि जीवन का यही सहारा है। प्राण-शक्ति प्रोटोप्लाज्म के द्वारा ही जीवन के सब काम करती है। कोष के भीतर का प्रोटोप्लाज्म यदि नष्ट हो जाय तो फिर जीवन के लक्षण भी नष्ट हो जाते हैं।

जरूरत होती है, उसी प्रकार हमारे शरीर के अलग-अलग अंग अलंग-अलग तरह के कोषों से मिल कर बने हैं। हड्डी के कोष, त्वचा या बाल या माँस के कोषों से बिलकुल भिन्न हैं। अलग-अलग तरह के काम के लिए अलग-अलग कोष हैं। आँतों के कोष अपना काम करते हैं। दिमाग़ के कोष अपना काम और त्वचा के कोष अपना। इसी प्रकार कुछ कोष ऐसे हैं जो वंश-वृद्धि का कार्य करते हैं।

"वंश-वृद्धि का कार्य !"

"हाँ, उन्नत प्रकार के सभी जीवधारियों में, सभी जीव-जन्तुओं और वृक्षों में वंश-वृद्धि के कार्य के लिए विशेष प्रकार के पदार्थ तैयार होते हैं। यद्यपि इनकी बनावट शरीर के अन्य कोषों से भिन्न होती है, परन्तु फिर भी वे शरीर के कोष होते हैं। वृक्षों में इनकी सहायता से ही नया बीज पैदा होता है। जीव-जन्तुओं में इनकी सहयता से ही नयी सन्तान उत्पन्न होती है।

'इन कोषों की सहायता से !'

'हाँ, इन कोषों की सहायता से।'

'सो किस तरह ?'

वह सब भी मैं तुम्हें बताऊँगा। सूक्ष्म जीवों में तो वंश-वृद्धि बहुत आसान तरीके से होती है। गुलाब की पत्तियों पर अकसर हरे रंग का एक अत्यन्त सूक्ष्म कीड़ा देखने में

कोष बढ़ते हैं और उनके बढ़ने का तरीका बड़ा अजीब है। एक कोष से दो होते हैं। दो से चार, चार से आठ, आठ से सोलह—इस प्रकार वे बराबर बढ़ते हैं। परन्तु उनके बढ़ने का एक नियम होता है। वे एक खास तरीके से बढ़ते हैं। कहाँ कितना और किस प्रकार बढ़ना है, इसका मानो उन्हें ज्ञान होता है। हमारा शरीर इस प्रकार के असंख्य छोटे-छोटे कोषों से मिलकर बना है। यदि हम अपने शरीर के किसी अंग को—हड्डी, त्वचा, बाल, या माँस के किसी अंश को—अणुवीक्षण यन्त्र की सहायता से देखें तो हमें पता चलेगा कि हजारों लाखों छोटे-छोटे कोष परस्पर जुड़े हुए हैं, और चुपचाप अपना-अपना काम कर रहे हैं।

ये कोष बहुत छोटे होते हैं। इतने छोटे कि उनका तुम अन्दाज नहीं लगा सकते। यदि हम साधारण से पाँच सौ कोष लेकर एक पंक्ति में सजा कर रक्खें तो उनकी लम्बाई मुश्किल से एक इंच होगी।

मानव शरीर का एक कोष (यह सौ गुना बड़ा करके दिखाया गया है।)

पेड़ पौधे भी इसी तरह के छोटे-छोटे कोषों से मिलकर बने हैं। हम सब छोटे-छोटे सजीव कोषों के समूह मात्र हैं।

ये सब कोष एकसे नहीं होते। मकान के अलग-अलग हिस्सों को बनाने के लिए जिस प्रकार अलग-अलग तरह के सामान की

जरूरत होती है, उसी प्रकार हमारे शरीर के अलग-अलग अंग अलग-अलग तरह के कोपों से मिल कर बने हैं। हड्डी के कोष, त्वचा या बाल या माँस के कोपों से बिलकुल भिन्न हैं। अलग-अलग तरह के काम के लिए अलग-अलग कोप हैं। आँतों के कोप अपना काम करते हैं। दिमाग़ के कोप अपना काम और त्वचा के कोष अपना। इसी प्रकार कुछ कोप ऐसे हैं जो वंश-वृद्धि का कार्य करते हैं।

"वंश-वृद्धि का कार्य !"

"हाँ, उन्नत प्रकार के सभी जीवधारियों में, सभी जीव-जन्तुओं और वृक्षों में वंश-वृद्धि के कार्य के लिए विशेप प्रकार के पदार्थ तैयार होते हैं। यद्यपि इनकी बनावट शरीर के अन्य कोपों से भिन्न होती है, परन्तु फिर भी वे शरीर के कोप होते हैं। वृक्षों में इनकी सहायता से ही नया बीज पैदा होता है। जीव-जन्तुओं में इनकी सहयता से ही नयी सन्तान उत्पन्न होती है।

'इन कोपों की सहायता से !'

'हाँ, इन कोपों की सहायता से।'

'सो किस तरह ?'

वह सब भी मैं तुम्हें बताऊँगा। सूक्ष्म जीवों में तो वंश-वृद्धि बहुत आसान तरीके से होती है। गुलाब की पत्तियों पर अकसर हरे रंग का एक अत्यन्त सूक्ष्म कीड़ा देखने में

आता है। यह कीड़ा बहुत सरल तरीके से अपनी वंश-वृद्धि करता है। वह एक अंडा देता है। यह अंडा उसके शरीर के अन्य कोषों की तरह ही एक कोष होता है जो धीरे-धीरे बढ़कर उस कीड़े की तरह का रूप धारण कर लेता है। इसके बाद इस नये कीड़े से फिर उसी तरह के दूसरे नये कीड़े पैदा होते हैं। तुम कह सकते हो कि यह कीड़ा अंग-विभाजन द्वारा अपनी वंश-वृद्धि करता है। परन्तु कुछ और भी सूक्ष्म जीव होते हैं। उनकी वंश-वृद्धि का तरीका इससे भी विचित्र है।

ये जीव इतने सूक्ष्म होते हैं कि तुम उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। उनका शरीर केवल एक कोष से बना होता है। इस प्रकार के एक जीव का हम विशेष रूप से वर्णन करना चाहते हैं। उसका नाम है *अमीबा*। यह एक कोषीय जीव है। मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि यह अपनी वंश-वृद्धि कैसे करता है।

सातवाँ अध्याय

सब से छोटा जीव

अमीबा पृथिवी का सबसे छोटा जीव है। मैं समझता हूँ, यह नाम तुम पहली बार ही सुन रहे हो। परन्तु मेरा विश्वास है कि इस विचित्र जीव से एक बार परिचित हो जाने पर इसे तुम कभी भूलोगे नहीं।

अमीबा बहुत छोटा होता है। इतना छोटा कि उसे तुम खाली आँख से नहीं देख सकते। गँदले पानी की एक बूँद में सहस्रों अमीबा हो सकते हैं। इतने से ही तुम उनकी सूक्ष्मता का अन्दाज़ लगा सकते हो।

अमीबा एक-कोषीय जीव है। उसका शरीर एक सूक्ष्म कोष से बना होता है—उसी तरह के एक कोष से जिसका वर्णन मैं कर चुका हूँ। उसके न मुँह होता है, न पेट और न हाथ होते हैं, न पैर। वह मानो स्वयम् सब कुछ है। पके हुए

सागूदाने की तरह एक लिबलिबी सी चीज, और वह भी सजीव! ऐसा होता है यह अमीबा!

अमीबा के मुँह नहीं होता। उसका सारा शरीर ही मुँह है। उसके उदर नहीं होता। उसका सारा शरीर ही उदर है। उसके पैर नहीं होते। उसका सारा शरीर ही पैरों का काम देता है।

गन्दे पानी की एक बूँद को ४० गुना बड़ाकर दिखाया गया है

इसमें अमीबा के साथ अन्य जीवाणु भी मौजूद है।

भूख लगने पर अमीबा हिलता-डुलता है। खाने की वस्तु मिलने पर वह उससे चिपक जाता है, और उसका रस चूसने लगता है। उसके भोजन करने का यही ढंग है।

अमीबा एक विलक्षण जीव है और उसकी वंश-वृद्धि का तरीका उससे भी अजीब! अमीबा खाता है और सन्तान-वृद्धि करता है। इसके सिवा उसे और कोई काम नहीं।

खा-पीकर तगड़ा होता है। बढ़ता है। तब सहसा खाना-पीना छोड़ बैठता है। इसके बाद एक अद्‌भुत घटना घटित
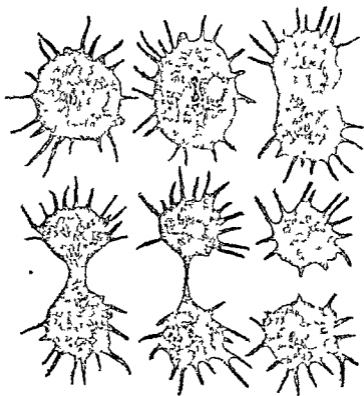
एक अमीबा धीरे धीरे कैसे दो हो जाता है

होती है। उसका शरीर आगे-पीछे कुछ फैलता है और बीच में सिकुड़ कर वहाँ से दो टूक हो जाता है। इस प्रकार एक से दो

अमीबा बन जाते हैं। दोनों में जीवन मौजूद रहता है। दोनों पहले के अमीबा की तरह खाते-पीते और बढ़ते हैं। और जब पहले की तरह हृष्ट-पुष्ट हो जाते हैं तब फिर दो से चार हो जाते हैं। चार से आठ होते हैं। आठ से सोलह और सोलह से बत्तीस। फिर बत्तीस से..........?

"चौंसठ !"

'हॉ, इस प्रकार अमीबा का कुटुम्ब लगातार बढ़ता है। थोड़े समय के भीतर ही एक कुटुम्ब मे अनगिनती प्राणी हो जाते हैं। परन्तु इस प्रकार लगातार टूक-टूक होते रहने की वजह से एक समय ऐसा आता है जब अमीबा की सन्तान कमजोर और शक्तिहीन होने लगती है। बच्चे पहले जैसे हृष्ट-पुष्ट नहीं होते। इसलिए शीघ्र मरने भी लगते हैं। तब प्रकृति एक नया खेल रचती है। इसकी बजाय कि अमीबा एक से दो हों, वे दो से एक होने का प्रयत्न करते हैं। वे परस्पर मिलने और एक होने की इच्छा प्रकट करते हैं।

यह तो सचमुच बड़ा अद्भुत है !

दो से एक बनने की यह प्रेरणा उन्हें कहॉ से मिलती है कुछ कहा नहीं जा सकता।

'क्या इस छोटे से प्राणी में इच्छा-शक्ति होती है ?

'नहीं, ये प्रकृति की प्रेरणा के वशीभूत होकर ही ऐसा करते हैं।

अमीवा के कुटुम्ब के ये दुर्बल बच्चे पानी में इस प्रकार तैरते रहते हैं मानो किसी को खोज रहे हों, और जिसे खोज रहे हैं वह मानो उन्हें मिल नहीं रहा है। वे एक दूसरे के समीप जाते हैं। क्षण भर रुकते हैं। और अलग होकर फिर पहले की तरह तैरने लगते हैं। इस तरह वे बराबर तैरते रहते हैं। अन्त में जिसे वे चाहते हैं वह मानो उन्हें मिल जाता है। हर एक को मानो उपयुक्त संगी मिल जाता है।

जानते हो, तब क्या होता है ?

दो अमीवा एक दूसरे के समीप पहुँचते हैं, मिलते हैं, चिपकते हैं, और एक दूसरे में घुलमिल कर एक हो जाते हैं।

इस प्रकार दो अमीवा के मिलने से एक नया अमीवा बन जाता है ! अमीवा की यह नयी सन्तान काफ़ी हृष्ट-पुष्ट होती है, क्योंकि वह दो के संयोग से बनती है। और जब यह अमीवा बड़ा हो जाता है तब वही पुराना किस्सा फिर शुरू हो जाता है। एक से दो और दो से चार, चार से आठ, आठ से सोलह.........इस प्रकार कुटुम्ब में प्राणियों की संख्या लाख दो लाख तक बढ़ती रहती है। और जब वंश में फिर दुर्बल बच्चों की सृष्टि होने लगती है तब मानो उन्हें स्वयम् यह ज्ञान हो जाता है कि अब एक से दो होने की बजाय दो के परस्पर मिलने का समय आ गया है। मानो वे जानते हैं कि यदि दो से ए

बनकर सबल और शक्तिवान बच्चों की सृष्टि नहीं की जायगी तो सन्तान कमज़ोर होकर मर जायगी और एक दिन उनके वंश का लोप हो जायगा।

इसलिए दो की शक्ति लेकर एक नया मजबूत अमीवा बनता है। और फिर वही किस्सा शुरू होता है। दो से चार। चार से आठ। आठ से सोलह और सोलह से.........

एक नये जीव की सृष्टि के लिए परस्पर दो जीव मिलते हैं। सृष्टि की परम्परा को कायम रखने का यह अद्भुत तरीका जब से यह पृथिवी बनी तब से बराबर चला आ रहा है। जीव-सृष्टि के लिए संगम की यह प्रवृत्ति अमीवा की तरह छोटे से छोटे वर्गों से लेकर उच्चवर्ग के सभी प्राणियों में विद्यमान है।

अवश्य कुछ पेड़-पौधे और जीवधारी अंग-विभाजन द्वारा अपनी वंश-वृद्धि करते हैं। केंचुए की जाति के कुछ कीड़े ऐसे होते हैं कि यदि घटना वशात् इनके शरीर का एक अंश कटकर उनसे अलग हो जाय तो वह कटा हुआ अंश बढ़ कर पूरा कीड़ा बन जाता है।

इसी प्रकार बहुत से सूक्ष्म कीड़े भी बिना किसी दूसरे की मदद के स्वयम् अपने अंग से अपनी वंश-वृद्धि कर लेते हैं। वे अंडा देते हैं। यह अंडा उनके शरीर के अन्य कोषों की तरह ही एक कोष होता है जो धीरे-धीरे बढ़ कर एक पूरा कीड़ा बन जाता

है। इस से फिर दूसरे कीड़े उत्पन्न होते हैं। और यह क्रम बराबर चलता रहता है।

वंश-वृद्धि का यह एक बहुत सरल और प्रारम्भिक रूप है। सृष्टि को कायम रखने के जो तरीके हैं उनकी यह पहली सीढ़ी है। एक जीव या पौधे के अंग से ही उसी प्रकार के नये जीव या पौधे पैदा होते हैं। बेला, चमेली, गुलाब, आलू तथा अमीबा की तरह के कुछ छोटे कीड़े-मकोड़े और केंचुए—ये सब आप अपने अंग से अपनी वंश-वृद्धि कर सकते हैं। इस कार्य के लिए उन्हें किसी दूसरे साथी की आवश्यकता नहीं होती।

किन्तु फिर भी अभी तुमने देखा है कि एक नये और हृष्ट-पुष्ट अमीबा को जन्म देने के उद्देश्य से, दो अमीबा एक दूसरे से मिलते हैं। वे अंग-विभाजन द्वारा अवश्य अपनी वंश-वृद्धि करते हैं। परन्तु बीच में कभी-कभी इस कार्य के लिए उन्हें एक साथी की जरूरत होती है। इसका मतलब केवल यह है कि अंग-विभाजन की क्रिया द्वारा जब वंश-वृद्धि का कार्य चलता नजर नहीं आया तब प्रकृति ने उसमें मानों कुछ सुधार किया। उसने देखा, वंश-वृद्धि के कार्य में एक की बजाय यदि दो प्राणी एक दूसरे के सहायक हों तो सन्तान अधिक बलवान और दीर्घजीवी होती है। और यदि एक ही व्यक्ति इस काम को करता जाय तो बच्चे कमजोर होकर शीघ्र मरने लगते हैं।

प्रकृति को तब दो जीवों की जरूरत हुई। पुरुष के साथ तब उसने स्त्री की सृष्टि की। निम्न श्रेणी के पेड़-पौधे तथा अन्य छोटे जीवधारी अकेले ही सन्तानोत्पत्ति कर सकते हैं। किन्तु उच्च श्रेणी के जीवधारी ऐसा करने में असमर्थ हैं। उनमें वंश-वृद्धि का कार्य स्त्री और पुरुष में बराबर बँटा हुआ है। कुछ कार्य पुरुष को करना पड़ता है तो कुछ स्त्री को। सन्तानोत्पत्ति के महत्वपूर्ण कार्य में दोनों को ही एक दूसरे की थोड़ी-थोड़ी सहायता करनी पड़ती है। दोनों को ही बराबर हिस्सा बँटाना पड़ता है। इस काम के लिए जीवधारियों के शरीर में विशेष प्रकार के कोष होते हैं। वे कोष आपस में मिलते और एक नये जीव की सृष्टि करते हैं।

पशु-पक्षियों तथा मनुष्यों के सम्बन्ध मे यह बात जितनी ठीक है उतनी ही पेड़-पौधों के सम्बन्ध मे भी है। दो विभिन्न प्रकार के तत्त्वो या कोषों के सम्मिलन से ही उनमें बीज की उत्पत्ति सम्भव होती है—ठीक उसी तरह जिस तरह कि अमीबा के दो कोषों के मिलने से एक नये अमीबा की सृष्टि होती है।

आठवाँ अध्याय

वंश-वृद्धि के साधन

वृक्ष एक स्थान से दूसरे स्थान को नहीं जा सकते। अन्य जीवों की तरह वे देख, सुन और बोल भी नहीं सकते। परन्तु उनमें पत्तियाँ होती हैं, जिनसे वे साँस लेते हैं। उनमें जड़ें होती हैं, जिनसे वे धरती के भीतर से भोजन का रस चूसते हैं। उनमें डंठल और टहनियाँ होती हैं, जिनसे उनका शरीर-पोषण होता है। और उनमें फूल भी होते हैं जिनसे उनकी वंश-वृद्धि होती है।

फूल के पराग और स्त्री केसर

इन फूलों के भीतर ही वृक्षों के वे बच्चे जन्म-धारण करते हैं, जिन्हें हम *बीज* कहते हैं। फूलों से ही बीज की उत्पत्ति होती है। फूल देखने में कितने सुन्दर होते हैं! हम अक्सर समझने लगते हैं कि फूलों की सृष्टि हमारे लिए ही हुई है। परन्तु वे हमारे लिए नहीं बने हैं।

फूलों से तो बीज बनते हैं।

हाँ, फूल वृक्ष का एक आवश्यक अंग है। फूलों के बिना बीज पैदा नहीं हो सकता। और बीज यदि न हों तो फिर नये वृक्ष कहाँ से आयें? समझती हो शान्ता?

फूल के भीतर वृक्ष का पूरा परिवार होता है। माता और पिता, दोनो ही। और फिर उनके बाल बच्चे भी। मैं तुम्हें बता चुका हूँ कि उन्नत प्रकार के सभी चर-अचर जीवों में सन्तानोत्पत्ति का काम दो व्यक्तियों में बँटा रहता है—माता और पिता में। इन दोनों के सहयोग से ही सन्तानोत्पत्ति होती है। फूल में भी ये दोनों मौजूद रहते हैं। उसके कुछ हिस्से तो माता का काम करते हैं और कुछ पिता का। उन दोनों के सहयोग से ही फूल के भीतर बीज का जन्म होता है।
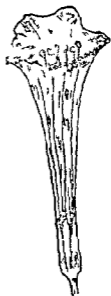
गुलाबाँस का फूल

तुम किसी भी फूल को तोड़ कर देखो। इस गुलाबाँस को ही ले लो। इसके तुम्हें अलग-अलग कई हिस्से नज़र आयेंगे। और यही हिस्से अधिकांश फूलों में होते हैं।

सब से नीचे यह गोल घुंडी। फिर हरी पत्तियों का यह घेरा। इसे पुटपत्र कहते हैं। घेरे के ऊपर रंगीन पँखुरियाँ जो आपस में मिली हुई हैं, और नीचे से तंग होकर ऊपर की ओर प्याले की तरह फैल गयी हैं। पँखुरियों के बीच में ये रंगीन और मुलायम डोरे। ये डोरे इस फूल के मुख्य अंग हैं।

इसी तरह के हिस्से तुम्हें प्रायः सभी फूलों में नजर आयेंगे। यह दूसरी बात है कि उनकी बनावट में फर्क हो।

पुं-केसर स्त्री-केसर को पराग दान कर रहे हैं
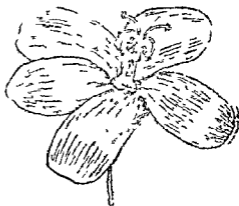
इन डोरों को केसर कहते हैं। इन सब के सिरे फूले हुए हैं। और तुम देखोगे कि बीच की जो केसर है उसके सिरे की बनावट औरों से भिन्न है। आस-पास की केसरों के सिरे थैली की तरह फूले हुए हैं। परन्तु बीच की जो केसर है उसके सिरे पर थैली के स्थान पर एक फुनगी सी है। साधारण अणुवीक्षण से देखने पर तुम्हें पता चलेगा कि यह बालों का एक गुच्छा सा है और उस पर गोंद जैसा एक

चिपचिपा पदार्थ लगा है। यह फूल का वह भाग है जो माता का कार्य करता है। इसलिए इसे *स्त्री-केसर* कहते हैं।

और आस-पास ये जो केसर हैं, और जिनके सिरों पर छोटी-छोटी सुन्दर और लाल थैलियाँ लगी हुई हैं, ये फूल के भीतर पुरुष का कार्य करते हैं। इसलिए इन्हें पु-केसर कहते हैं। ये थैलियाँ कितनी मुलायम और खूबसूरत हैं। इनके भीतर जानते हो क्या भरा हुआ है?

पराग!

"हाँ, ठीक कहते, इनके भीतर पराग भरा हुआ है।

फूल की पँखुरियों से घिरी परागदानी

यदि तुम इन्हें हाथ से मसलो तो पिसी हुई हल्दी की तरह के पीले और सूक्ष्म कण तुम्हारे हाथ में लग जायँगे। यह फूलों का पराग है। पराग से भरी हुई ये थैलियाँ *परागदानी* कहलाती हैं। पराग-कण देखने में यद्यपि बहुत साधारण जान पड़ते हैं, परन्तु इनके भीतर ही बीज की उत्पत्ति का सारा रहस्य छिपा हुआ है। बीज की उत्पत्ति इनके द्वारा ही होती है।

यदि तुम फूल की पँखुरियों को तोड़ो तो उनके साथ पुं-केसर भी टूट कर अलग हो जायेंगे। और स्त्री-केसर को तुम नीचे की इस गोल घुंडी से जुड़ा हुआ पाओगे। वास्तव में यह घुंडी स्त्री-केसर का ही एक अंग है। घुंडी समेत यह केसर एक चीज है। स्त्री-केसर की बनावट एक खोखली नली के समान है। यह नली इस घुंडी को ऊपर की फुनगी से जोड़ती है।

इस घुंडी के भीतर ही बीज का जन्म होता है। इसलिए इसे *गर्भाशय* कहते हैं।

पुं-केसर स्त्री केसर
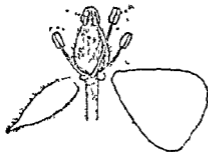
फूल की पँखुरियाँ, पराग और स्त्री-केसर

स्त्री केसर के द्वारा परागकण गर्भाशय में पहुँचते हैं। वहाँ पहुँच कर बीज को जन्म देते हैं। परागकण वृक्ष का ही एक अंग हैं। वृक्ष के अंग प्रत्यंग जिन सूक्ष्म कोषों से मिलकर बने हैं, ये उसी प्रकार के सूक्ष्म कोष हैं। केवल इनकी बनावट वृक्ष के अन्य कोषों से भिन्न है।

क्योंकि प्रकृति ने एक भिन्न कार्य के लिए इनकी सृष्टि की है। ये कोष गर्भाशय में जाकर अन्य दूसरे कोषों से मिलते हैं। गर्भाशय के ये कोष भी वृक्ष का एक सूक्ष्म अंग हैं; परन्तु प्रकृति मे वे पराग-कोष से बिलकुल भिन्न होते हैं। पराग कोष मे पिता के गुण होते है और इसमें माता के गुण ! माता की प्रकृति वाले इन कोषों के समूह को रज या *बीजाणु* कहते हैं।

गर्भाशय के भीतर जब रज पक जाता है, तब स्त्री-केसर का अग्र भाग चिपचिपा हो उठता है। उधर पराग भी जब पक कर तैयार होता है, और रज से उसके मिलने का समय आता है तब परागदानियाँ फटने लगती हैं और पराग के कण फूल के भीतर बिखर जाते हैं। इनमे से अधिकांश तो हवा मे उड़ जाते हैं, परन्तु फिर भी कुछ कण तो स्त्री-केसर के अग्र-भाग से जाकर चिपक ही जाते हैं। बीज की उत्पत्ति के लिए पराग का एक कण बहुत काफ़ी है। बीजाणु के साथ पराग का संयोग होते ही बीज का जन्म हो जाता

पराग और स्त्री-केसर

है। बीजाणु धीरे-धीरे बढ़ता और बीज का रूप धारण कर लेता है।

बीज के पक जाने पर फूल मुरझा जाता है और पंखुरियाँ गिर जाती हैं। क्योंकि उनका काम पूरा हो जाता है।

पराग और बीजाणु का संयोग जीव-जगत की एक अद्भुत घटना है। इन दोनों के संयोग से ही बीज की उत्पत्ति होती है। यदि स्त्री-केसर के मुँह पर पराग-कण न गिरें तो बीज उत्पन्न नहीं होता। फूल मुरझा कर गिर जाता है और वृक्ष के सन्तान पैदा नहीं हो पाती।

नवाँ अध्याय

पराग-मिश्रण

परन्तु पराग और बीजाणु के मिलन की यह कहानी यहीं खतम नहीं हो जाती। यह तो मैंने उसका वर्णन संक्षेप में किया है, जिसमें इस विषय की और अधिक बातें जानने और समझने की उत्कंठा तुम्हारे मन में जाग्रत हो।

फूल के भीतर यद्यपि पुं-केसर और स्त्री-केसर दोनों ही मौजूद होते हैं, परन्तु एक फूल का पराग उसी फूल की स्त्री-केसर पर बहुत कम जाकर गिरता है। यदि एक ही फूल का पराग इसी फूल के रज से मिले, तो ऐसा होने से बच्चे बराबर दुर्बल होते जायँगे। यहाँ तक कि कुछ समय उपरान्त उन फूलों का वंश ही नष्ट हो जायगा।

अमीबा के सम्बन्ध में तुम देख चुके हो कि अंग-विभाजन द्वारा सन्तानोत्पत्ति होते-होते जब उनके बच्चे कमज़ोर होने

लगते हैं तब एक अमीवा एक दूसरे अमीवा के साथ सम्बन्ध स्थापित करने को उत्सुक हो उठता है। ठीक ऐसा ही फूलों में भी होता है। फूल अपने घर में प्रायः कम विवाह करते हैं। एक ही फूल का पराग उसी फूल के रज के साथ न मिल जाय, इस विषय में प्रकृति बहुत सतर्क रहती है। फूलों का अपने घर या गोत्र में ही विवाह होंना उसे पसन्द नहीं। इसलिए एक ही फूल के पराग-केसर और स्त्री-केसर एक साथ बहुत कम पकते हैं। दो में से एक बात होती है। या तो पहले परागदानी पकती है और उसका-पराग हवा में उड़ कर उस फूल पर जा गिरता है जिसकी स्त्री-केसर पक चुकती है। अथवा स्त्री-केसर का मुँह पराग-ग्रहण के लिए पहले ही खुल जाता है और दूसरे फूलों का पराग उस पर आ गिरता है।

यह पराग क्या चीज़ है जो एक अन्य फूल के रजकोष से मिलकर तुरन्त उसमें बढ़ने की शक्ति उत्पन्न कर देता है? किस चीज से यह बना है? इसे कोई नहीं जानता। परन्तु पृथिवी पर जितने भी चराचर प्राणी हैं उन सब में ऐसा ही होता है। पुरुष का एक सूक्ष्म अंश—एक सूक्ष्म कोष—स्त्री के एक सूक्ष्म कोष से मिलता और एक नये जीव की सृष्टि करता है। ये सूक्ष्म कोष क्या हैं और इनके भीतर जीवन का कौन सा रहस्य छिपा है यह

बताना बड़ा कठिन है। हम तुम्हें संक्षेप में यही बता सकते हैं कि यह सब कैसे होता है।

फूलों में भिन्न गोत्रीय विवाह का यह नियम सचमुच ही बड़ा विचित्र है। इस नियम का पालन इतनी दृढ़ता से होता है कि किसी फूल का पराग यदि उसी फूल के स्त्री-केसर के मुँह पर गिर भी जाय तो वह नीचे गर्भाशय में नहीं पहुँचता और यदि पहुँचे भी तो गर्भाशय बीज को उत्पन्न किये बिना ही मुरझा जाता है।

अच्छे और उच्च श्रेणी के वृक्ष सगोत्र विवाह से सदैव बचते हैं। इससे उनकी नस्ल कमजोर हो जाने का डर रहता है। इसलिए ऊँची श्रेणी के अधिकांश पौधों में पराग-केसर यदि एक फूल में होती है तो स्त्री-केसर दूसरे में। या कहना चाहिए कि एक फूल यदि पुरुष जाति का होता है तो दूसरा स्त्री जाति का। बीज या फल स्त्री जाति के फूलों में ही लगते हैं। खीरा, लौकी, तुरई, कद्दू, आदि इसी किस्म के पौधे हैं। इनमें नर और मादा जाति के फूल अलग-अलग लगते हैं।

प्रकृति इससे भी आगे बढ़ी है। उसने कुछ ऐसे भी वृक्ष उत्पन्न किये हैं जिनमें पुरुष और स्त्री जाति के फूल अलग अलग पौधों पर होते हैं। अर्थात् एक वृक्ष में यदि पुरुष जाति के फूल लगते हैं तो दूसरे में स्त्री जाति के। पपीता इसका

वहुत परिचित उदाहरण है। पपीते के वृक्ष में नर और मादा जाति के फूल अलग-अलग पौधों पर लगते हैं। जिस पौधे में नर फूल लगते हैं उसमें फल नहीं आते। फल मादा-फूल में ही आते हैं। मादा वृक्षों के बीच में दो एक नर-वृक्षों का होना आवश्यक है, अन्यथा मादा वृक्षों में फल नहीं लगेंगे।

मादा फूल के खिल चुकने के बाद स्त्री-केसर का मुँह पराग-ग्रहण के लिए अपने आप खुल जाता है। उधर कुछ नर फूल भी खिल कर तैयार हो चुकते हैं। उनकी परागदानियाँ खुल जाती हैं। पराग-कण बाहर निकलते और फूलों से चिपक कर रह जाते हैं। यह वह समय है जब नर और मादा फूल सन्तान पैदा करने के लिए तैयार होते हैं। परन्तु पौधे तो हैं अचर प्राणी। ऐसी दशा में एक नर फूल का पराग दूसरे मादा तक कैसे पहुँचे ?

प्रकृति ने इसका भी वहुत सुन्दर प्रबन्ध कर रक्खा है। हवा, पानी, कीड़े और चिड़ियों द्वारा प्रकृति एक फूल का पराग दूसरे मादा फूल तक पहुँचाती रहती है।

पराग-कण बहुत नन्हे और हलके होते हैं। इसलिए वे या तो हवा में उड़ कर पहुँच जाते हैं, या जब उन पर मधु-मक्खियाँ आकर बैठती हैं तो उनके पैरों से चिपक जाते हैं। इस प्रकार हवा या मधु-मक्खी के द्वारा पराग एक फूल से दूसरे फूल तक

पहुँचता है । और उस के कुछ कण स्त्री-केसर के लसीले मुँह पर जा गिरते हैं। तब एक विचित्र बात होती है। पराग-कण बढ़ने लगता है। उसमें से एक पतली नली बाहर निकलती और स्त्री-केसर की नली में होकर गर्भाशय तक पहुँचती है। गर्भाशय के भीतर रज के एक या एक से अधिक कई छोटे-छोटे रजकोष होते हैं। इन में स्वयम् बढ़ने की शक्ति नहीं होती । ये पराग कणों के साथ मिलने पर ही बढ़ते हैं। गुलाबाँस में इस

१. परागदानी, जिसमें से पराग के फल बिखर रहे हैं २. पराग फल ३. स्त्री-केसर का मुँह ४. पराग फल से बाहर निकलती हुई नली ५. कच्चा परागदानी ६. गर्भाशय ७. बीजाणु

प्रकार का केवल एक रजकोष होता है। भिन्न-भिन्न वृक्षों में इनकी संख्या भिन्न-भिन्न होती हैं। ये बहुत नन्हे और कोमल

होते हैं, इनकी तुलना तुम मादा चिड़िया के शरीर में जो अंडे होते हैं उनसे कर सकते हो। क्योंकि इनका भी वही उद्देश्य होता है जो इन रजकोषों का।

इन को तुम बीज नहीं कह सकते। इनमें स्वयम् बढ़ने और बीज बनने की शक्ति का अभाव होता है। नर फूल के पराग से मिलने पर इनमें वह बढ़ने की शक्ति आती है। पराग से मिलकर ये *संजीवित* हो उठते हैं। पराग की नली ज्यों ही गर्भाशय में पहुँचती और बीजाणुओं का स्पर्श करती है त्यों ही दो शक्तियों के मिलने और एक होने का अद्‌भुत कार्य शुरू हो जाता है। बोलचाल की भाषा में तुम कह सकते हो कि फूल के भीतर तब *गर्भ* रह जाता है। समझती हो शान्ता ? रजकोष तब धीरे-धीरे बढ़ता और बीज का रूप धारण कर लेता है। यह बीज अपने माता-पिता की सन्तान है। इसमें माता और पिता दोनों के ही गुण छिपे रहते हैं। आगे चलकर यह माता-पिता जैसा ही एक बड़ा वृक्ष बनता है।

रजकोष के साथ उसके ऊपर का आवरण भी बढ़ता है। कुछ पौधों मे यह आवरण गूदेदार होता है, और गूदे के भीतर बीज होते हैं। सेब, नासपाती, अंगूर, खरबूजा, लौकी, कद्दू आदि में ऐसा ही होता है। ऊपर गूदा और उसके भीतर बीज। यह गूदा वास्तव में गर्भाशय का हिस्सा है। जो बीज मुलायम और

रसदार गूदे से ढके रहते हैं उन्हें हम फल कहते हैं। फल खाने के काम आते है। परन्तु इन्हे उत्पन्न करने का प्रकृति का उद्देश्य तो केवल बीजों को सुरक्षित रखना है। फलों के पकने पर उनमें गूदा और रस बनता है। रस और गूदे को ता हम खा लेते हैं और बीजों को फेक देते हैं। इससे उन फलो का वंश फिर आगे बढता है।

कुछ फल ऊपर से बडे सख्त होते हैं, परन्तु भीतर से मुलायम और खाने योग्य। पिस्ता, बादाम, अखरोट, ऐसे ही फल है। और कुछ ऐसे होते हैं कि उनके भीतर तो सख्त गुठली निकलती है, परन्तु ऊपर रसदार गूदा होता है। बेर, आम, ऑवला, खूबानी, आडू आदि ऐसे ही फल हैं। कभी-कभी फलों का यह गूदा छिलके वाली एक फली का रूप धारण कर लेता है। फली के भीतर एक पंक्ति मे पॉच या छः बीज बन्द रहते हैं। जैसे सेम, मटर उर्द, बबूल आदि की फली में। कुछ सूखी फलियों के भीतर राई के तरह दर्जनों छोटे छोटे बीज होते हैं। वास्तव मे बीज अनेक प्रकार के होते हैं। ये बीज या तो बालो मे लगते हैं, या फलियों के भीतर होते हैं, या गूदो से और छिलकों से ढके रहते हैं। हम

मटर की फली

जिन बीजों के रस या गूदे को खाते हैं केवल उन्हें ही फल कहते हैं। परन्तु वास्तव में सब बीज फल ही तो हैं। वे अपने माता पिता की सन्तान हैं। उनकी सम्मिलित शक्तियों से पैदा हुए हैं। जमीन में बो देने से वे बढ़ने लगते हैं, और माता-पिता के समान ही एक वृक्ष बन जाते हैं।

अनार का फूल, फल और बीज

पराग-मिश्रण की कहानी अभी खतम नहीं हुई। इस सम्बन्ध में तुम्हें दो एक बातें और भी बतानी हैं। तुम्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि प्रकृति कितनी तरह से इस विषय में फूलों की सहायता करती है।

फूल देखने में कितने सुन्दर होते हैं। परन्तु प्रकृति ने क्या उन्हें हमारे लिए नहीं बनाया है। हमारे लिए वह ऐसा क्यों करने लगी? उसे तो अपने काम से काम! फूलों को इतना सुन्दर रंग-रूप प्रकृति ने इसलिए दिया है कि कीड़े-मकोड़े दूर से ही आकृष्ट होकर उनके पास आयें, उन पर बैठें और उनका मधुपान करें। और इस तरह एक फूल का पराग दूसरे फूल तक पहुँचायें। हरी पत्तियों के बीच में रंगीन या सफेद रंग के उजले फूल दूर से ही नजर आ जाते हैं। इतना ही नहीं। फूलों की मधुर गन्ध भी कीड़ों-मकोड़ों को अपने प्रति आकृष्ट करती है।

परन्तु सब फूलों में गन्ध नहीं होती। रंगीन और भड़कीले फूल प्रायः गन्धहीन होते हैं। रंग की वजह से वे दूर से ही नजर आ जाते हैं। गन्ध की उनमें आवश्यकता नहीं होती।

परन्तु उजले और सफेद फूलों मे प्रायः मधुर गन्ध होती है। रात्रि के अन्धकार मे लाल, पीले, और बैंजनी रंग के फूल दिखायी नहीं देते। इसलिए इस समय श्वेत फूल ही अधिक खिलते हैं।

फूलों पर शहद की मक्खियाँ आ रही हैं

बेला, चमेली, जुही रजनी-गन्धा आदि रात्रि के समय ही खिलते हैं। उनकी मधुर गन्ध के कारण पत्तों में भी कीड़े-मकोड़ों को शीघ्र उनका पता लग जाता है।

परन्तु प्रकृति अपना काम यहीं बन्द नहीं कर देती। वह अपने किसी एक उद्देश्य की सिद्धि के लिए प्रायः अनेक उपायों से काम लेती है। शायद कीट-पतंगों के लिए फूलों के रंग और गन्ध का आयोजन काफी नहीं। इसलिए फूलों को प्रकृति ने मधु भी दिया है। मधु के लोभ से तितली, भौंरा, मधुमक्खी आदि जीव फूलों के पास आते और मधु की तलाश में पंखुरियों पर इधर से उधर उड़ते हैं। तब उनके पैर और पंखे पराग से सन जाते हैं। इस हालत में जब वे उसी जाति के दूसरे मादा फूल पर जाकर बैठते हैं तब पराग के कुछ कण अपने आप ही उस फूल के स्त्री-केसर के लसीले मुँह से चिपक कर रह जाते हैं। कुछ फूलों में से तो रात्रि के समय विशेष रूप से बड़ी खुशबू निकलती है। ऐसा रात्रि में उड़ने वाले पतंगों को आकृष्ट करने के लिए ही होता है।

बीजों की उत्पत्ति के लिए फूलों और कीड़ों का यह पारस्परिक सहयोग सचमुच बड़ा आश्चर्यजनक है। प्रकृति ने तरह-तरह के फूल बनाये हैं। साथ ही इन फूलों को पसन्द करने के लिए उसने तरह-तरह के कीड़े भी बनाये हैं। उदाहरण के लिए कुछ फूल तो सचमुच ही बदबूदार होते हैं। एक विशेष प्रकार की मक्खी को उनकी यह दुर्गन्ध बहुत पसन्द है। दुर्गन्ध से आकृष्ट होकर वह फूलों पर अपने अंडे देने के लिए आती है और इस

प्रकार अज्ञात रूप से ही पराग-मिश्रण के कार्य में प्रकृति की सहायता करती है।

जिन फूलों में केवल हवा की सहायता से पराग के कण मादा फूल के पास पहुँचते हैं वे देखने में प्रायः बहुत भड़कीले नहीं होते और उनमें मधु भी अधिक नहीं होता। क्योंकि वंश-वृद्धि के लिए वे कीड़ों पर निर्भर नहीं करते। उनमें कीड़ों के द्वारा वंश-वृद्धि नहीं होती। अधिकांश बड़े वृक्ष, जड़ी-बूटी, घास-पात मक्का, गेहूँ और नाना प्रकार की दालें—इन सब के फूल प्रायः सादा और रंगहीन होते हैं। परन्तु इनमें पराग खूब होता है। पराग का अधिकांश भाग हवा में इधर-उधर उड़कर बेकार चला जाता है। इसलिए प्रकृति पहले से ही इतना पराग उत्पन्न करती है कि हवा में इधर-उधर उड़ने के बाद भी उसका कुछ अंश फूलों तक पहुँच सके। चीर, बबूल, मक्का, आदि की बालें पराग से भरी होती हैं। परन्तु उस पराग का बहुत थोड़ा अंश ही काम में आता है। बाकी बेकार इधर-उधर उड़ जाता है। प्रकृति को इसकी बहुत चिन्ता नहीं होती। उसे तो किसी प्रकार अपना उद्देश्य पूरा करना है।

पराग का मिलन हुए बिना बीज की उत्पत्ति नहीं होती। यह सिद्धान्त सर्वत्र एक सा लागू होता है। प्रकृति के इस नियम में कभी बाधा उपस्थित नहीं होती। प्रकृति का यह नियम अटूट है। दो भिन्न प्रकृति के जीवों की सहायता के बिना—स्त्री और पुरुष के मिले बिना-सन्तान नहीं होती। वृक्षों मे भी ऐसा ही होता है। जीवधारियों में भी ऐसा ही होता है। फिर भी इस विषय मे दोनों में जो भेद है वह मैं तुम्हें बताता हूँ।

दसवाँ अध्याय

जीव-जन्तुओं में वंश-वृद्धि

वृक्ष चल फिर नहीं सकते। इसलिए प्रकृति उनकी सहायता करती है। हवा और कीड़े-मकोड़ों के जरिये एक फूल का पराग दूसरे फूल की स्त्री-केसर के मुँह पर जाकर गिरता है और इस प्रकार एक बीज का जन्म होता है। वृक्षों को इसका कुछ पता नहीं चलता कि पराग कहाँ जाकर गिरा। हवा जहाँ चाहती है वहाँ पराग को उड़ा कर ले जाती है। वृक्षों का इस कार्य में कोई हाथ नहीं होता।

परन्तु चर प्राणी एक स्थान से दूसरे स्थान को जा सकते हैं। इसलिए सन्तानोत्पत्ति के उद्देश्य से उनमें नर और मादा एक दूसरे से मिलते हैं। या तो नर मादा के पास जाता है, या मादा नर के पास आती है। परन्तु यह एक ही बात है। कहने का आशय केवल यह है मिलने की इच्छा दोनों में मौजूद रहती

है। नर जिसे चाहता है उस मादा के पास जाता है। सन्तानोत्पत्ति के लिए वह इच्छापूर्वक मादा का चुनाव करता है। मादा के पास जाकर वह उससे मिलता और सन्तानोत्पत्ति करता है—फिर चाहे बच्चों की खबर जिन्दगी भर न ले।

जीवधारी जितनी ही ऊँची श्रेणी के होते हैं, उनमें एक दूसरे से मिलने की यह भावना उतनी ही प्रबल होती है। यहाँ तक कि उच्च श्रेणी के जीवधारियों में मादा चाहे जिस नर को अपने पास नहीं आने देती। उदाहरण के लिए पक्षियों में मादा चिड़िया जिस नर को पसन्द करती है उसी को अपने पास आने देती है।

इस विषय में मछलियाँ अन्य जीवधारियों से बिलकुल ही भिन्न हैं। वे वृक्षों से मिलती-जुलती हैं। साल में एक बार मादा मछलियाँ नदी या समुद्र के किनारे जाती और वहाँ किसी एकान्त स्थान में पानी पर हज़ारों अंडे दे आती हैं। इन अंडों की तुलना तुम मादा फूल के रजकणों से कर सकते हो। ये अंडे मादा मछली के शरीर के भीतर मलद्वार के पास एक खास तरह की थैली में तैयार होते हैं। यह थैली एक नली द्वारा मलद्वार से मिली होती है जहाँ से अंडे बाहर निकलते हैं। मछली के पेट से बाहर निकल कर ये नदी या समुद्र की तह में बैठ जाते हैं। बस, मादा मछली का कार्य यहीं खतम हो जाता है। अंडे देकर वह

एकत्र भी हो जाय तो भी वे एक दूसरे को नहीं पहचान सकेंगे। बल्कि कहना तो यह चाहिए कि उनमें कुटुम्ब होता ही नहीं। मछली के बाल-बच्चे और माता-पिता एक जगह मिल कर नहीं रहते और न सन्तानोत्पत्ति के लिए नर मछली ही मादा मछली से मिलती है!

परन्तु अन्य सभी छोटे और बड़े जीव इस विषय में मछली से आगे बढ़े हुए हैं। मच्छर, मक्खी, तितली, चींटी, मकड़ी, मगर और सर्प, ये सभी जीव सन्तानोत्पत्ति के लिए आपस मे केवल मिलते ही नहीं हैं, बल्कि अकसर एक दूसरे को अपना समझते भी हैं। अकसर एक दूसरे से प्यार भी करते हैं। तुम देखोगे कि प्रेम और वात्सल्य की ये उच्च भावनाएँ उन जीवों में और भी अधिक मात्रा में पायी जाती हैं जो कुटुम्ब बना कर रहते हैं।

प्रेम और वात्सल्य की इस भावना के अतिरिक्त कीड़े-मकोड़ों, और सर्प-मगर आदि रेंग कर चलने वाले जीवों में, सन्तानोत्पत्ति का तरीका भी कुछ जटिल होता है।

मछली में मादा के रज या अडों के साथ नर के वीर्य का सयोग मादा के शरीर के बाहर होता है। परन्तु अन्य छोटे या बड़े जीवधारियों में अधिकतर इन दोनों का संयोग मादा के शरीर के भीतर ही होता है। रज के साथ नर के वीर्य का संयोग होने से रज-कण बढ़ने लगते हैं। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार

पराग-कण के संयोग से फूलों के रजकोष बढ़ते और बीज बनते हैं। इस कार्य के लिए नर के शरीर में बाहर की तरफ एक नली सी होती है। इसके द्वारा वीर्य मलद्वार से मादा के शरीर में प्रवेश करता है। उदाहरण के लिए जब नर छिपकली या नर तितली मादा छिपकली या मादा तितली से मिलती और अपनी इन्द्रिय से उसके मलद्वार को छूती है तो वीर्य के कुछ कण मादा के शरीर के भीतर जाते हैं, और एक नली द्वारा गर्भाशय में पहुँच कर रज-कणों को संजीवित कर देते हैं। अकसर इस कार्य के लिए मादा के शरीर में अलग से एक छिद्र होता है। जिसे *जननेन्द्रिय* कहते हैं।

इन इन्द्रियों की बनावट अलग-अलग जीवों में अलग-अलग तरह की होती है। परन्तु नर के वीर्य से जब तक कीड़े-मकोड़ों या साँप, छिपकली आदि की मादा के शरीर के रजकण संजीवित नहीं होते तब तक मादा अंडे नहीं देती। इन्हें तुम अंडे कह सकते हो परन्तु देखने में, वे एक दूसरे से बहुत भिन्न होते हैं।

मच्छर और मगर, इन दोनों के अंडों में बड़ा फ़र्क होता है। मच्छर के अंडे आकार में ही छोटे नहीं होते, वरन् उनकी बनावट भी भिन्न होती है।

जीव-जन्तुओं की मादाएँ—मछली, साँप और मेंढक से लेकर चिड़ियों तक की मादाएँ—जब अंडे देती हैं तो बच्चे तुरन्त ही उन से बाहर नहीं निकल आते।

अंडों के भीतर उस समय वे अविकसित अवस्था में होते हैं। उनके अंग-प्रत्यंग पूरे नहीं बने होते। धीरे-धीरे अंडों के भीतर ही उनके शरीर का पूरा विकास होता है और तब वे बाहर निकलते हैं।

इतना ही नहीं। बहुत से जीवों के बच्चे तो—मक्खी, मच्छर, तितली, चींटी, टिड्डा, मेंढक, आदि जीवों के बच्चे तो—मा के शरीर से बाहर निकल कर विकास की कई श्रेणियाँ पार करते हैं। वे कई दफ़े—अकसर चार या पाँच दफ़े—अपना चोला बदलते हैं और तब कहीं अपने असली रूप में हमारे सामने आते हैं।

यह सचमुच बड़ा विचित्र है। जिन जीवों को हम अत्यन्त साधारण और तुच्छ समझते हैं उनका जीवन भी महान् आश्चर्य से भरा हुआ है। विद्वानों ने इन छोटे जीवों के सम्बन्ध में अनेक बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे हैं। यह गुबरीला, यह चींटी, यह टिड्डा, ये सभी बड़े अद्भुत और आश्चर्यजनक हैं। कभी मैं अवश्य तुम्हें उनके जीवन की पूरी कहानी सुनाऊँगा। परन्तु इनमें से एक की जीवन-कहानी फिर भी सुनने योग्य है।

ग्यारहवाँ अध्याय

प्रकृति का जादू

यह तितली है। देखते हो सन्तू, यह किस प्रकार एक फूल से दूसरे फूल पर उड़ रही है। ऐसा जान पड़ता है मानो बगीचे के किसी पीले फूल ने ही पतंगे का रूप धारण करके उड़ना शुरू कर दिया है। देखने में यह जितनी सुन्दर है उतनी ही विचित्र इसके *जीवन की कहानी भी है!*

क्या तुम जानते हो कि एक दिन यह देखने मे उतनी ही बद-शकल और भौंडी थी जितनी आज रंगीन और चमकीली है ?

एक दिन यह ठीक इस इल्ली की तरह थी जो भिंडी के इस पत्ते पर रेंग रही है। एक दिन यह भी इल्ली थी!

तुम इन इल्लियों से अच्छी तरह परिचित हो। माली इन से बड़ा हैरान है। देखते हो, लोबिया के पत्तों को किस तरह खा डाला है, मानों किसी ने कैंची से कतर दिया हो। इन इल्लियों

को सिवाय खाने के और कुछ कार्य नहीं है। अडे से बाहर निकलते ही ये खाना शुरू कर देती हैं। कभी-कभी तो अडे के उस छिलके को ही खा डालती हैं जिससे ये बाहर निकलती हैं।

तितली के अडे बहुत छोटे होते हैं। मगर फिर भी तुम उन्हें खाली ऑख से देख सकते हो। एक पत्ते से दूसरे पत्ते पर वह जो तितली उड रही है वह मेरा ख्याल है कि अडे दे रही है। अडो से कुछ दिनों में छोटी-छोटी इल्लियाँ निकलती हैं। भिंडी के इन पत्तों पर इस तरह की इल्लियाँ मौजूद हैं। ये कितनी छोटी हैं! परन्तु कुछ दिनों में बढ़कर इसी बड़ी इल्ली के बराबर हो जायेंगी।

तितली

इन सब का रंग भिंडी के इन पत्तों से कैसा मिल रहा है! जैसी हरी पत्तियाँ हैं वैसी ही ये इल्लियाँ भी।

और इनके चलने का ढंग भी तुमने देखा! कैसा विचित्र है! पहले आगे के पंजों से पत्ते को पकड़ती हैं। फिर पीछे के पैरों को उठाकर आगे के पजे के पास लाती हैं। इस तरह

अपने शरीर की एक कुंडी सी बना देती हैं। फिर आगे के पैरों को उठाकर शरीर फैलाती हैं, और पहले की तरह ही फिर पिछले सिरे को आगे लाकर कुंडी बनाती हैं। और फिर उसी प्रकार जमीन नापती हुई आगे बढ़ती हैं। परन्तु सब इल्लियाँ इस प्रकार नहीं चलतीं।

इल्ली

और खाने की तो कुछ पूछो ही नहीं! इल्लियाँ दिन भर खाती रहती हैं। इतना खाती हैं, इतना खाती हैं कि खाते-खाते एक दिन सचमुच उनका पेट फट जाता है।

तुम समझते होगे कि इससे इल्ली की मृत्यु हो जाती होगी। परन्तु नहीं। इल्ली मरती नहीं। वह साँप की तरह केवल अपनी केंचुल बदल लेती है।

एक साहब ने हिसाब लगाकर बताया है कि इल्ली दिन भर में अपने शरीर के वजन से दुगुना भोजन करती है। और फल स्वरूप उस वजन का $\frac{1}{10}$ हिस्सा रोज बढ़ती भी है। इसलिए आश्चर्य नहीं कि हर दूसरे या तीसरे सप्ताह उसे एक नये कोट की जरूरत पड़ती हो।

इल्ली इस प्रकार तीन चार मर्तबा केंचुल बदलती है। परन्तु चौथी या पाँचवीं मर्तबा केंचुल बदलते समय खाल के भीतर से एक विलक्षण ही जीव बाहर निकलता है! वह देखने में इल्ली से बिलकुल भिन्न होता है। उसके अवयव बिलकुल बदले नजर आते हैं। रंग भी बदल जाता है। मानो वह किसी विचित्र रूप में हमारे सामने आने की तैयारी कर रही हैं। एक सिकुड़ी हु चीज होती है, जिसके न हाथ पैर होते हैं और न मुँह होता है। खाल से बाहर निकल कर यह नया कीड़ा अपने चारों तरफ एक जाला बुनता है और उस के भीतर आराम से पड़ा रहता है। एकाध दिन के बाद ही उसके शरीर का रंग बदलने लगता है और साथ ही ऊपर की खाल धीरे-धीरे कठोर भी होने लगती है। प्रकृति का काम यहीं खतम नहीं होता। इस कीड़े में अभी और भी परिवर्तन होता है।

दो एक दिन बाद यदि तुम उसे देखो तो जहाँ पहले एक कुलबुलाता हुआ कीड़ा था वहाँ एक छोटी सी निर्जीव चीज़ पड़ी नज़र आयेगी। वह देखने में ठीक उन शंखियों की तरह होती है जो नदी किनारे अकसर पड़ी मिलती हैं। उसे देखकर तुम यकायक यह नहीं कह सकते कि वह कोई सजीव चीज़ है। उसके हाथ पैर आदि कुछ नहीं होते। फिर भी पेन्सिल की नोक

अथवा किसी और चीज़ से तुम उसे दबाओ तो वह तुम्हें हिलती-डुलती और काँपती नज़र आयेगी।

इस तरह की शंखियाँ—इल्ली के इस रूप को *शंखी* ही कहते हैं—तुम्हें इस बगीचे में बहुत मिल सकती हैं। यह देखो। सेम के इस पत्ते के नीचे एक शंखी है। जाले के भीतर उसने अपने को किस तरह ढक रक्खा है! और स्वयम् उसके भीतर कौन सा अद्भुत जादू छिपा है कुछ कहा नहीं जा सकता।

शंखी

वह इस समय बिलकुल चुप और निर्जीव सी है। परन्तु एक दिन उसके भीतर एक आश्चर्य-जनक घटना घटित होती है। उस समय यदि तुम वहाँ मौजूद होओ तो शंखी तुम्हें कुछ हिलती-डुलती नज़र आयेगी। और यदि एकाध मिनट ही वहाँ और खड़े रहो तो देखोगे कि ऊपर की सख्त चमड़ी एक तरफ से अलग हो रही है, और उसके भीतर से मकड़ी के जाले की तरह के नन्हे-नन्हे कोमल और सुकुमार पैर बाहर निकल रहे हैं। और उन पैरों के साथ ही लुज-पुंज अवस्था में एक खूबसूरत सी चीज़ बाहर निकलती है जिसके रंगीन, मगर अभी कमज़ोर और सिकुड़े

हुए पंखे तुम्हें साफ नजर आयेंगे—मानो एक फूल है जो अभी पूरा खिला नहीं है।

अपने आवरण से बाहर निकल कर फूल जैसी यह चीज, धीरे-धीरे रेंग कर चलती और घसिटती है, और उडने के लिए पंखे फैलाने की कोशिश करती है। तब एक और चमत्कार होता है! देखते-देखते उस नन्हे से जीव के पंखे कुछ बढ़ जाते हैं, और रोशनी में चमक उठते हैं, और तब तुम्हें तितली स्पष्ट नजर आ जाती है—एक रंगीन और चमकीली तितली, मानो इन्द्र-धनुष के रंगों से किसी ने उसके पंखों को रंग दिया है!

तितली तब अपने ख़ूबसूर पंखे फैलाती और देखते-देखते प्रकाश और मधु की खोज में हवा में उड़ जाती है!

परन्तु नहीं। भोजन की उसे उतनी आवश्यकता नहीं होती। हवा में इधर-उधर उडकर वह अपने लिए एक साथी की तलाश करती है। स्वाभाविक रूप से ही उसके मन में जोडे से मिलने की इच्छा जाग्रत होती है। यदि वह मादा तितली हुई तो नर तितली की तलाश में बगीचे में इधर से उधर उडती फिरती है। और उसे अपनी ओर आकृष्ट करने के लए तरह-तरह की तरकीबें करती है—नाचती है, चचल हकर इधर से उधर उडती है, तरह-तरह की क्रीडा करती है, और अपने रगीन परो दिखाती है। अन्त मे नर तितली उसके प्रति आकृष्ट होकर आती और उससे मिलती है और इस प्रकार मिलने पर उसका वीर्य मादा के शरीर में पहुँच जाता है। और मादा तितली *गर्भवती* हो जाती है।
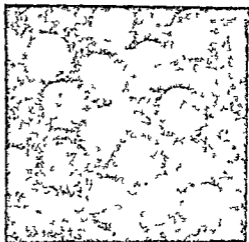
तितली के अंडे (बहुत बडाकर)

तब वह अडे देने की फिक्र करती है। मालूम नहीं इस बात का पता उसे कैसे लग जाता है कि इन अडों से जो बच्चे निकलेंगे

वे सेम, गोभी, भिंडी, मूली, आलू या लौकी के पत्तों में से किस एक को ज्यादा पसन्द करेंगे। जिन पत्तों को वह समझती है कि उसके बच्चों को अधिक पसन्द आयेंगे उन पर ही वह अपने अंडे देती है।

और तब जानते हो क्या होता है? अडे देकर तितली मर जाती है। उसकी जीवन-लीला समाप्त हो जाती है। मानो उसका जन्म केवल इसलिए हुआ था कि अपनी तरह की कुछ और तितलियों को पैदा कर दे और चली जाय। बेचारी तितली!

गेहूँ, चना, मक्का आदि के पौधे भी बीज पैदा करने के बाद इसी तरह मुरझा कर नष्ट हो जाते हैं। इस विषय मे उनमें और तितली में कोई अन्तर नहीं है। अपनी ही तरह के कुछ और पौधों की उत्पत्ति का उचित प्रबन्ध करके पेड़ भी सूख जाते हैं, और तितली भी अपनी ही तरह की और तितलियों को पैदा करके खतम हो जाती है! मानो प्रकृति का एक मात्र यही उद्देश्य है—*पेड़-पौधे और जीव-जन्तु वंश-वृद्धि करें और नष्ट हो जायें।*

अपने इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए पेड़ों की वंश-वृद्धि का इन्तजाम तो उसने स्वयम् अपने हाथ में ले रक्खा है। पेड़ प्राकृतिक रूप से ही खाते-पीते और बढ़ते हैं और वंश-वृद्धि का काम भी उनमे प्राकृतिक रूप से ही होता रहता है। वे

क्या करते हैं, और क्या नहीं करते हैं, इसका उन्हें कुछ ज्ञान नहीं होता। उनके सब कार्य अनजाने ही अपने आप होते हैं। जैसे नदी अपने आप बहती है। सूरज अपने आप उदय होता है। फूल अपने आप खिलते हैं।

परन्तु जीवधारियों में हमेशा ऐसा नहीं होता। प्रकृति ने उन्हें भूख और प्रेम नाम की दो प्रेरणाएँ दे रक्खी हैं, जिनके वशीभूत होकर वे अपने अधिकांश काम करते हैं। जीवित रहने के लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक है इसलिए प्रकृति ने जीवधारियों को भूख दी है। भूख की इच्छा के वशीभूत होकर हम भोजन करते और जीवित रहते हैं।

साथ ही प्रकृति यह भी चाहती है कि संसार में जितने भी जीव-जन्तु हैं वे सब मरने के बाद अपना नाम निशान छोड़ जायें। और इस कार्य के लिए दो भिन्न तत्त्वों का—स्त्री और पुरुष का—परस्पर मिलना अत्यन्त आवश्यक है। इनके मिले बिना सन्तानोत्पत्ति असम्भव है। इसलिए प्रकृति ने जीवधारियों को प्रेम दिया है। छोटे जीवधारियों के सम्बन्ध में यद्यपि ठीक इस शब्द का व्यवहार नहीं किया जा सकता; परन्तु फिर भी यह कहने में कुछ हर्ज नहीं है कि नर तितली मादा तितली के रूप से आकृष्ट होकर उसके पास आती है, उससे प्रेम करती है और उससे मिलती है। तितली की वंश-वृद्धि के लिए यह बहुत जरूरी है।

नर और मादा के मिलने से ही वंश-वृद्धि हो सकती है। प्रकृति का यही अटूट नियम है। पेड़ पौधों मे यही होता है। कीड़ों में यही होता है। दुनिया के सब जीवों में यही होता है। इसलिए नर तितली मादा तितली के रूप से आकृष्ट होकर उसके पास आती और अपने शरीर के वे खास कोष, जिन्हें प्रकृति ने इसी उद्देश्य से तैयार किया है, मादा तितला के शरीर के अन्दर जमा करके चली जाती है। इससे मादा तितली के शरीर के दूसरे कोप संजीवित हो उठते हैं। उनमें से हर एक में उसी तरह के एक नये जीव का बीज पड़ जाता है। इस प्रकार नर तितली यदि मादा तितली को देखकर उसके प्रति आकृष्ट न हो और उससे जाकर न मिले तो उसी प्रकार की अन्य तितलियाँ पैदा ही न हों और उसी तरह की अन्य तितलियाँ अगर पैदा न हों तो प्रकृति का काम एक दम रुक जाय !

"तितलियों के पैदा न होने से !"

"नहीं, नहीं, मेरा मतलब सभी जीवों से है। इस तरह एक जीव यदि अपनी ही तरह के अन्य जीवों को पैदा न करता रहे तो प्रकृति का चक्र जरूर रुक जाय। जीवन-धारण की तरह वंश-वृद्धि का कार्य भी एक जरूरी चीज है। इसलिए प्रकृति ने भूख के साथ ही प्रेम नाम की एक चीज पैदा कर दी है जिसके वश में होकर पुरुष और स्त्री एक दूसरे से मिलते और वंश-वृद्धि करते हैं।

भूख और प्रेम! प्रकृति का सारा चक्र इन दो को लेकर ही चलता है। समझे तुम? जीव पैदा होते हैं, रहते हैं, वंश-वृद्धि करते हैं और इस तरह अपनी तरह के और जीवों को उत्पन्न कर मर जाते हैं।

परन्तु यह तो बताइये, जीव जन्तुओं को जब जिन्दा ही रहना है तो प्रकृति उन्हें मार क्यों डालती है?

"ओह, शान्ता कभी-कभी बडा अजीब सवाल पूछ बैठती है। मरना उतना ही स्वाभाविक है जितना कि जिन्दा रहना। बल्कि कहना चाहिए कि मरना ही अधिक स्वाभाविक है। दुनिया की सभी चीजें एक न एक दिन नष्ट होती हैं। हम जो कपडा पहने हैं वह एक दिन जीर्ण होकर फट जायगा। हमारी सभी चीजें धीरे धीरे जीर्ण होकर एक दिन नष्ट हो जायेंगी। हमारा यह कुरता, हमारी यह टोपी, हमारा यह कोट, हमारी सभी चीजें धीरे-धीरे घिस रही हैं और नष्ट हो रही हैं। ठीक यही बात जीव जन्तुओं के सम्बन्ध में भी है। संसार में जितने भी सजीव प्राणी हैं, जितने भी जीव-जन्तु और पेड पौधे हैं वे सभी बढकर जीर्ण होते हैं और फिर जीर्ण होकर एक दिन नष्ट भी हो जाते हैं।

बारहवाँ अध्याय

जीवों की रक्षा

तुमने देख लिया कि मछली में वीर्य और रज का संयोग मादा के शरीर के बाहर होता है। अंडे देने के बाद मादा उनकी कोई खबर नहीं लेती। अपने बच्चों से उसे कोई प्रेम नहीं होता। वह उन्हें अपना नहीं समझती।

तितली में भी ऐसा ही होता है। मादा तितली अंडे देने के बाद उनकी जरा भी फिक्र नहीं करती। उनको प्रकृति के सहारे छोड़ कर स्वयम् मर जाती है।

और प्रकृति अनेक तरह से उन अंडों की रक्षा करती है। सब से पहली बात तो यह है कि जो जीव जन्म के बाद अपने बच्चों की परवा नहीं करते, वे प्रायः बहुत अधिक अंडे देते हैं। तितली एक दफे में कई सौ अंडे देती है। ये अंडे इतने छोटे होते हैं कि आसानी से नजर नहीं आते। और फिर

इनका रंग प्रायः उस चीज़ से मिलता है जिस पर वे रक्खे होते हैं। यह इसलिए कि वे शत्रुओं के आक्रमण से बचे रहें। फिर इन अंडों से जो इल्लियाँ निकलती हैं उनका रंग भी प्रायः आस पास की चीज़ों से बिलकुल मिलता हुआ होता है। इल्ली ही क्यों, अधिकांश छोटे जीवों का रंग-रूप और बनावट ऐसी होती है कि अपने शत्रुओं को वे यकायक नज़र नहीं आते।

कठफुड़वे ने इल्ली पकड़ ली है

मगर वह देखो, सन्तू, इस कठफुड़वे ने अभी-अभी एक इल्ली पकड़ ली है। वह किस तरह उसकी चोंच में कुल-बुला रही है! परन्तु मैं तुम्हें बतलाता हूँ कि यह इल्ली अपनी गलती से ही चिड़िया के पंजे में पड़ गयी है। अगर वह चुपचाप भिंडी के पत्ते पर बैठी रहती तो सम्भव है चिड़िया की नज़र उस पर न पड़ती। परन्तु वह ज़रूर जल्दी-जल्दी

कहीं भागी जा रही होगी और उसी समय चिड़िया ने उसे देख लिया होगा।

परन्तु इल्लियाँ कई रंग की होती हैं। हरी, पीली, काली, लाल और भूरी भी। तुम कहोगे कि इन इल्लियों की रक्षा कैसे होती है। इनको तो चिड़ियाँ दूर से ही देख कर खा जाती होंगी। परन्तु नहीं। प्रकृति ने इनकी रक्षा का भी प्रबन्ध किया है। रंग-बिरंगी इल्लियाँ चिड़ियों को प्रायः स्वादिष्ट नहीं लगतीं। इसलिए वे उन्हें नहीं खातीं। वल्कि कुछ इल्लियों के बदन पर तो लम्बे बाल होते हैं। अगर कोई चिड़िया भूल से उनको खा जाये तो बाल गले में अटक जाते हैं, और उससे चिड़िया को ऐसी तकलीफ होती है कि वह दुबारा उन्हें खाने का नाम नहीं लेती।

इस प्रकार छोटे और कमजोर कीड़े-मकोड़ों की रक्षा का प्रकृति ने और भी बहुत सा प्रबन्ध कर रक्खा है। उसका यह एक साधारण उदाहरण है। ये सब हमारी कहानी के बाहर की बातें हैं। परन्तु फिर भी मैं उनकी चर्चा इसलिए कर रहा हूँ कि इस विषय का अधिक ज्ञान प्राप्त करने की उत्कंठा तुम्हारे मन में जाग्रत हो।

हाँ तो, छोटे कीड़े-मकोड़े, और खास कर ऐसे जीव जो स्वयम् अपने बच्चों की देख-भाल करने की परवा नहीं करते,

प्रायः अधिक अंडे देते हैं, इतने अधिक कि उनकी संख्या पर तुम विश्वास नहीं करोगे। और यह सब इसलिए कि सरदी से, गरमी से, हवा से, पानी से, और कीड़े-मकोड़ों के आक्रमण से नष्ट-भ्रष्ट होने के बाद भी थोड़े बहुत अवश्य बच रहें। मेढकी एक दफे में हज़ारों अंडे देती है। तुम्हीं सोचो, ये अंडे आखिर कहाँ तक नष्ट होंगे ? नष्ट होते-होते अन्त में सौ दो सौ बच ही रहते हैं, जो मेढकों के वंश को चलाने के लिए बहुत काफी हैं !

इस प्रकार प्रकृति अनेक तरह से जीवों की रक्षा करती रहती है।

तेरहवाँ अध्याय

मेंढक का जीवन-वृत्तान्त

यह देखिये, एक मेंढक !

ओह, मेंढक की चर्चा करते-करते वह तुम्हें नज़र भी आ गया। उसकी आँखें किस तरह चमक रही हैं! और ज़रा उसके बैठने का ढंग तो देखो! अपना बदन फुला कर हम लोगों को इस तरह एकटक होकर देख रहा है मानो बड़ा लालबुझक्कड़ है। कुछ आदमी ऐसे होते हैं जो देखने में तो बड़े चतुर जान पड़ते हैं, परन्तु वास्तव में मूर्ख होते हैं। यह मेंढक भी मुझे उन आदमियों की याद दिला देता है। देखने में तो यह बड़ा बुद्धिमान जान पड़ता है, परन्तु शरीर की अपेक्षा इसका दिमाग़ बहुत छोटा होता है। और उससे काम लेना भी यह बहुत कम जानता है।

परन्तु फिर भी मैं तुम्हें यह बता देना चाहता हूँ कि यह बहुत सीधा जानवर है। कभी किसी को हानि नहीं पहुँचाता। बल्कि बगीचे के कीड़े-मकोड़ों को खाकर पेड़ों की रक्षा के सम्बन्ध में माली की बड़ी सहायता करता है।

ये मेढक करीब-करीब मछली की तरह ही अपनी वंश-वृद्धि करते हैं। इनमें मेढकी के रज के साथ मेढक के वीर्य का संयोग मेढकी के शरीर के बाहर ही होता है। परन्तु फिर भी एक खास बात है। मछलियों में तो नर मछली बिना किसी विचार के, चाहे जिस मादा मछली के अंडों को अपने वीर्य से संजीवित करती है। ये अडे किस मछली के हैं, और मछली अब कहाँ है, इन बातों की उसे कोई चिन्ता नहीं होती। उसे तो जहाँ अंडे रक्खे नजर आते हैं वहीं जाकर वह अपना वीर्य उन पर छोड़ देती है।

परन्तु मेढकों में ऐसा नहीं होता। मेढक इस कार्य के लिए मेढकी की तलाश करता है। जिस मेढकी को वह अपने बच्चों की मा बनाना चाहता है, उसके पास वह खास तौर से जाता है, उसका आलिंगन करता है, और उसे दबाता है। और तब एक विचित्र बात होती है। मेढकी के शरीर से रजकोष बाहर निकलते हैं। और साथ ही मेढक के शरीर से भी वीर्य-कण निकलते हैं। ये वीर्य कण मेढकी के रज-कणों पर जाकर गिरते हैं और उनके
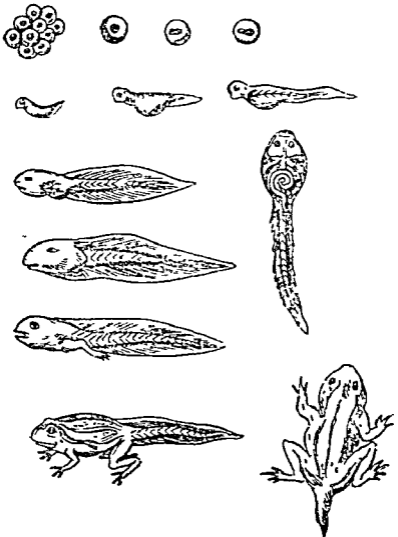
मेंढक के जीवन का क्रमिक विकास

संयोग से रज का प्रत्येक दाना संजीवित हो उठता है। उसमें एक नये जीवन का संचार हो जाता है। दाने बढ़ने लगते हैं, और उनसे मेढक पैदा होते हैं।

मैंने तुम्हें मेढक के अंडे दिखाये हैं। ये अंडे कुछ गोल और काले से रंग के होते हैं और लेई की तरह की एक लिबलिबी चीज से ढके रहते हैं। इससे अंडों की रक्षा ही नहीं होती बल्कि उनको भोजन भी प्राप्त होता है। बरसात के दिनों में इस तरह के बहुत से अंडे तुम किसी भी पोखरे में जाकर देख सकते हो। वे तुम्हें पानी पर तैरते हुए स्पष्ट नजर आयेंगे। कुछ दिनों में ये अंडे फूल उठते हैं। उस समय इनका आकार कुछ लम्बा हो जाता है। अंडों की इस अवस्था को भ्रूण कहते हैं। भ्रूण धीरे-धीरे बढ़कर मेढक के बच्चों का रूप धारण करते हैं।

परन्तु शुरू में इन बच्चों का आकार बड़ा विचित्र होता है। इनको देखकर तुम यह नहीं कह सकते कि ये मेढक के बच्चे हैं। सिर, पेट और दुम के सिवा और कोई चीज उनके नजर नहीं आती। ये बच्चे पानी के नीचे किसी चीज से जाकर चिपक जाते हैं और पड़े रहते हैं। कुछ दिनों में इनके अवयव प्रकट होते हैं। पहले मुँह का छिद्र और फिर श्वास लेने के लिए थैली बनती है। तब वे ऊपर आकर पानी में इधर से उधर तैरने लगते हैं, और जल के सूक्ष्म जीवों को खाकर जीवित रहते हैं। धीरे-

धीरे सामने के और फिर पीछे के पैर बाहर निकलते हैं। यद्यपि आगे के पैर पहले बनते हैं, परन्तु ढके रहने की वजह से ऐसा भ्रम होने लगता है कि पीछे के पैर ही पहले निकले हैं। तब साँस लेने की थैली सूख जाती है और शरीर के भीतर फेफड़े बनते हैं। इस अवस्था में ये बच्चे देखने में बहुत कुछ मेढक जैसे होते हैं। केवल उनके पूँछ अधिक होती है। ज्यों-ज्यों शरीर बढ़ता है, त्यों-त्यों पूँछ भी छोटी होती जाती है। और अंत में पूँछ के बिलकुल गायब हो जाने पर ये बच्चे पूरे मेढक का रूप धारण कर लेते हैं। तब पानी को छोड़कर ये ज़मीन पर भी उछल आते हैं।

मेढक वर्षा ऋतु में ही अंडे देते हैं। वर्षा का प्रारम्भ होते ही मेढकों की टर्र-टर्र से दिशाएँ गूँज उठती हैं। इस आवाज़ को मेढक का संगीत ही कहना चाहिए। इसके द्वारा वे मेढकियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हैं।

शीत-ऋतु की लम्बी और गहरी नींद के बाद वर्षा का पहला पानी पड़ते ही मेढक अपने बिलों से बाहर निकलते और नज़दीक के किसी तालाब की तरफ चल देते हैं। भूख तो उनको सताती ही है, परन्तु उनके मन में एक और ऐसी वासना जाग्रत हो उठती है जिसके वशीभूत होकर मेढक और मेढकियाँ, दोनों ही एक दूसरे से मिलने के लिए व्याकुल हो उठते हैं, और पानी की तलाश में चल पड़ते हैं। मेढक और मेढकियों का मिलन

जल में ही हो सकता है। जल के बाहर मिलने से कोई फायदा नहीं, क्योंकि उनके छोटे बच्चे, और अंडे जमीन पर नहीं रह सकते। इसलिए वर्षा ऋतु में नजदीक के पोखरे जब जल से भर उठते हैं तो मेढक और मेढकियाँ अपने आप ही बिलों से बाहर निकल-निकल कर पानी की तरफ खिंचे चले जाते हैं।

क्यों सन्तू तुम्हें याद है ? पारसाल जब एक दिन खूब पानी बरसा, और सुबह हम लोग यहाँ आये तो पोखरे में मेढक ही मेढक नज़र आ रहे थे। टर्र-टर्र से सारा बग़ीचा गूँज रहा था। यह आवाज नर मेढक के गले से ही निकलती है। इस आवाज के दो ही मतलब हो सकते हैं। या तो अपने इस संगीत के द्वारा मेढक मेढकियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हैं और या उनसे मिलने की उत्कंठा प्रकट करते हैं। यह आवाज वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में ही सुनायी पड़ती है। उसके बाद यकायक बन्द हो जाती है। जैसा हम बता चुके हैं, तालाब में पहुँच कर मेढक और मेढकियाँ आपस में मिलती हैं। बच्चे पैदा करती हैं, बच्चे बड़े होते हैं, जल से बाहर निकलते हैं और भोजन की तलाश में इधर-उधर घूमने लगते हैं।

इस तरह इन मेढकों के दिन व्यतीत होते है और जब फिर शीत ऋतु आती है तो सारे मेढक फिर बिलों के अन्दर घुस कर

लम्बी समाधि लगा जाते हैं, और वर्षा-ऋतु के आने तक बिना कुछ खाये-पिये वैसे ही चुपचाप पड़े रहते हैं, ।

यहाँ भी तुम वही बात देखोगे। सन्तान पैदा करने के बाद मेढक आराम से सोने के लिए चले जाते हैं। उनकी नींद खुलती भी है तो केवल इसलिए कि नर और मादा मिलकर वंश को चलाने का प्रबन्ध कर दें। भोजन की वे अधिक चिन्ता नहीं करते। उसकी तो केवल उतनी ही जरूरत है, जितने से एक जीव अपने शरीर को धारण रख सके। तितली को भी खाने पीने की कुछ फिक्र नहीं होती है। वह वास्तव में बहुत कम खाती पीती है। खाने की कमी को तो वह जन्म के पहले ही पूरी कर चुकती है। अब तो उसे प्रकृति का असली उद्देश्य पूरा करने की चिन्ता होती है—और वह उद्देश्य है—मरने के पहले अपनी ही तरह की कुछ और तितलियों को छोड जाना, ताकि दुनिया से उनका लोप न हो जाये।

इसलिए कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता है कि भूख की बजाय प्रेम अधिक प्रबल चीज है। भूख की इच्छा तो केवल एक साधन है जिसके जरिये प्रकृति अपने असली और महान् उद्देश्य की पूर्ति करती है।

आगे चल कर जब तुम इस विषय का और अध्ययन करोगे, तो देखोगे कि प्रेम सचमुच ही अन्य वासनाओं से अधिक प्रबल

है और वह अन्य वासनाओं से अधिक ऊँची वस्तु भी है। भोजन से हम केवल जीवित रहते हैं। परन्तु प्रेम से यह सारा जीव-जगत सुन्दर और कोमल बनता है। पुरुष अपनी स्त्री को प्यार करता है। माँ अपने बच्चे को प्यार करती है। देखते हो, उधर वह जो गाय बँधी है किस तरह अपने बछड़े को चाट रही है और उसे प्यार कर रही है। परन्तु पुरुष और स्त्री के प्यार और माँ और बच्चे के प्यार में अन्तर है। पुरुष और स्त्री का प्यार वंश-वृद्धि के लिए माँ और बच्चे का प्यार वंश की रक्षा के लिए है।

यह मेढक भी, जो देखने में इतना कुरूप है, कभी-कभी अपने अंडों को प्यार करता नजर आता है। यह गुण इस में भी है। कुछ मेढक तो वास्तव मे ऐसे होते है कि जब तक अंडे पक कर तैयार नहीं हो जाते तब तक उनके पास से हटने का नाम नहीं लेते।

और एक मेढकी तो ऐसी होती है कि उसकी पीठ पर छोटे-छोटे गड्ढे होते हैं। अंडे जब शरीर से बाहर निकलते हैं तो उनको वह एक-एक करके अपने पंजों से उठा कर उन गड्ढों में रख लेती है। ये अंडे अपने आप ही एक पतली सी झिल्ली से ढक जाते हैं और जब तक उनमें से बच्चे नहीं निकल आते तब तक उस के अन्दर ही बन्द रहते हैं।

परन्तु एक बात है। मेढक, मछली, साँप, तथा और भी अनेक जीव-जन्तुओं में, नर और मादा एक दूसरे से मिलने के

बाद ही अलग हो जाते हैं। बच्चों की वे कोई फिक्र नहीं करते। वे सब एक जगह मिलकर नहीं रहते। तुम कह सकते हो कि वे परिवार बना कर रहना नहीं जानते। उनके बच्चे अनाथ होते हैं। उनकी देखभाल के लिए कोई नहीं होता। मा के गर्भ से बाहर निकलने के बाद उन्हें स्वयम् भोजन की चिन्ता करनी पड़ती है और उनकी परवरिश यदि कोई करता है तो प्रकृति ही करती है।

परन्तु जीव-जन्तुओं की इस अद्भुत दुनिया में कुछ ऐसे भी छोटे जीव हैं जो परिवार बना कर रहना जानते हैं। वे घर बना कर, आपस में मिल-जुल कर रहते हैं। उनके घर में स्त्री, पुरुष और बाल-बच्चे ही नहीं होते, बल्कि दास-दासियाँ भी होती हैं।

"आपका मतलब चींटी और मधुमक्खी से है ?"

"ज़रूर ! इनके जीवन की विचित्र कहानी मैं तुम्हें कई बार सुना चुका हूँ। उसे यहाँ दुहराने की जरूरत नहीं है, परन्तु फिर भी कुछ आवश्यक बातें तो बतानी ही पड़ेंगी।

चौदहवाँ अध्याय

ईश्वर की सृष्टि के दो अद्भुत जीव

चींटी ईश्वर की सृष्टि का एक अद्भुत नमूना है। वह देखने में अत्यन्त छोटी होती है, परन्तु उसका मस्तिष्क एक महान् आश्चर्य की वस्तु है। चीटियों के रहने का ढंग, उनके परिवार का संगठन, उनकी एकता, उनकी बुद्धिमत्ता, उनकी परिश्रमशीलता आदि बातें देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है।

चींटियाँ दल या परिवार बनाकर रहती हैं। उनके प्रत्येक दल में एक स्त्री या रानी होती है। कुटुम्ब के सब लोग उसकी आज्ञा मानते हैं। रानी का काम अंडे देना है। बाकी सब कार्य नौकर-चाकर करते हैं।

चींटियों के दल में जो पुरुष होते हैं, वे बड़े आलसी होते हैं। मजदूर चींटियाँ बड़ी परिश्रमी होती हैं। गृहस्थी का सब कार्य वही चलाती हैं। इनमें जो चींटियाँ कुछ बड़ी और बलिष्ठ होती

हैं वे सिपाही का काम करती हैं और बाकी बच्चों की सेवा-शुश्रूषा करती हैं। सिपाही च के जबड़े बड़े मजबूत होते हैं। दूसरे दल की चींटियों के आक्रमण से वे अपने दल की रक्षा ही नहीं करतीं, बल्कि अकसर सन्तरी का कार्य भी करती हैं, और जरूरत पड़ने पर युद्ध में अपने प्राण त्याग करने के लिए भी हमेशा तैयार रहती हैं

मजदूर चींटियाँ भोजन इकट्ठा करती हैं, घर बनाती हैं, और उस की सफाई करती हैं। बच्चों का पालन-पोषण, रानी की सेवा, तथा गृहस्थी के अन्य कार्य भी उन्हीं के सुपुर्द रहते हैं।

चींटी

नर चींटी की तरह रानी चींटी भी आलसी होती है। बच्चे पैदा करने के सिवा उसे और कोई काम नहीं होता। रानी और राजा साधारणतः घर में ही रहते हैं, बाहर नहीं निकलते।

रानी चींटी देखने में काफी बड़ी होती है। पेट में जब अंडे होते हैं तब तो वह और भी बड़ी नजर आती है। चींटी एक बार में असंख्य अंडे देती है। अंडे देखने में खूब छोटे और सफ़ेद से होते हैं। वे स्वयम् एक आश्चर्य की वस्तु हैं। यथा समय अंडों के भीतर से सुँड़ी की तरह के बहुत छोटे-छोटे बच्चे बाहर निकलते

हैं। ये बच्चे अपने मुँह से एक प्रकार की लार बाहर निकालते हैं, और अपने चारों ओर काग़ज़ की तरह की एक पतली झिल्ली तैयार करते है। समय पाकर इन सुँडियों के भीतर से पूरी चींटियाँ बाहर निकलतीं हैं जो परिस्थिति के अनुसार स्त्री-पुरुष या मज़दूर चींटी बन जाती हैं। मौका मिलने पर स्त्री और पुरुष चींटियाँ घर से बाहर निकलती और आकाश में उड़ने लगतीं हैं।

"उड़ने लगतीं हैं!"

"हाँ, मैं तुम से यह कहना भूल गया कि स्त्री और पुरुष चींटियों के पंखे होते हैं, परन्तु मज़दूर चींटियों में इनका अभाव होता है। बरसात में अकसर छोटी छोटी असंख्य पखियाँ यकायक पैदा हो जाती हैं। सम्भवतः वे चींटियाँ होतीं हैं।

इन चींटियों की आयु बहुत कम होती है। ये अकसर आकाश में उड़ते-उड़ते ही अपने प्राण त्याग देती हैं। फिर भी कुछ नर और मादा चींटियाँ तो बच ही जाती हैं, जो आकाश में उड़ती और मिलती रहती हैं। इस तरह नर के संयोग से मादा के रज-कण संजीवित हो जाते हैं। मादा के गर्भ रह जाता है। मादा को गर्भवती करने के बाद नर तो अकसर मर जाता है और मादा चींटी नीचे गिर पड़ती है। उसके पंखे भीं गिर जाते हैं, क्योंकि वे बड़े कमज़ोर होते हैं। चींटी तब ज़मीन के अन्दर जाकर अपना घर बनाती है। घर ज़मीन के

उसे जब ऐसा लगता है कि अब बाहर जाना चाहिए—तब एक दिन वह अपने साथियों के साथ छत्ते से बाहर निकलती है। दल में करीब बीस हजार मजदूर मक्खियाँ होती हैं, और दो तीन सौ पुरुष मक्खियाँ। ये मक्खियाँ, नर चींटियों की तरह कुछ काम नहीं करतीं। ये भी बड़ी आलसी होती हैं, और दूसरों के परिश्रम से इकट्ठा किए हुए शहद को खाकर ही जीवित रहती हैं। परन्तु

नर　　　मजदूर मक्खी　　　रानी-मक्खी

जब छत्ते के भीतर शहद की कमी होती है तो मजदूर मक्खियाँ अकसर उन्हें बाहर निकाल देती हैं या मार डालती हैं। कहने की जरूरत नहीं कि छत्ते से बाहर निकल कर वे भूखों मर जाती हैं। फिर भी इस बात का ख्याल रक्खा जाता है कि छत्ते में कुछ पुरुष मक्खियाँ जरूर बच रहें। क्योंकि हर साल अनेक रानी मक्खियाँ पैदा होती रहती हैं और उनसे बच्चे पैदा करने के लिए नर मक्खियों की जरूरत पड़ती है।

बहुत नीचे होता है और जब तक बच्चे पैदा नहीं होते तब तक चींटी रानी वहीं रहती है।

'बिना कुछ खाये-पिये ?"

"खाने पीने की वह अधिक आवश्यकता अनुभव नहीं करती। अब तो उसे जीवन का दूसरा ही काम पूरा करना है। फिर भी खाने का कुछ इन्तजाम तो उसके पास होता ही है। जब तक उसे बाहर से कुछ भोजन नहीं मिलता तब तक वह अपने शरीर में इकट्ठी हुई चर्बी को हजम करके ही जीवित रहती है।

शुरू में पहली बार स्वयम् रानी ही बच्चों की देख-भाल करती है। उसके बाद यह काम दास-दासी करते हैं, जो पहली बार के इन बच्चों से तैयार होते हैं। इस तरह रानी दस, पन्द्रह, और कभी-कभी बीस वर्ष तक जीवित रहती और बच्चे देती रहती है।

मधु-मक्खियों के जीवन का इतिहास भी करीब-करीब ऐसा ही है। प्रत्येक छत्ते में एक रानी मक्खी होती है। वह देखने में अन्य मक्खियों से कुछ बड़ी और बलिष्ठ होती है। अन्य साधारण मक्खियाँ एक दो महीने के भीतर ही मर जाती हैं, परन्तु रानी मक्खी बहुत दिनों तक जीवित रहती है। वह जीवन में एक बार ही घर से बाहर निकलती है—उस समय जब कि वह जवान हो जाती है, उसके अंग-प्रत्यंग जब पुष्ट हो जाते हैं और

उसे जब ऐसा लगता है कि अब बाहर जाना चाहिए—तब एक दिन वह अपने साथियों के साथ छत्ते से बाहर निकलती है। दल में करीब बीस हजार मजदूर मक्खियाँ होती हैं, और दो तीन सौ पुरुष मक्खियाँ। ये मक्खियाँ, नर चींटियों की तरह कुछ काम नहीं करतीं। ये भी बड़ी आलसी होती हैं, और दूसरों के परिश्रम से इकट्ठा किए हुए शहद को खाकर ही जीवित रहती हैं। परन्तु

नर मजदूर मक्खी रानी-मक्खी

जब छत्ते के भीतर शहद की कमी होती है तो मजदूर मक्खियाँ अकसर उन्हें बाहर निकाल देती हैं या मार डालती हैं। कहने की जरूरत नहीं कि छत्ते से बाहर निकल कर वे भूखों मर जाती हैं। फिर भी इस बात का ख्याल रक्खा जाता है कि छत्ते में कुछ पुरुष मक्खियाँ जरूर बच रहें। क्योंकि हर साल अनेक रानी मक्खियाँ पैदा होती रहती हैं और उनसे बच्चे पैदा करने के लिए नर मक्खियों की जरूरत पड़ती है।

नौजवान रानी मक्खी छत्ते से बाहर निकल कर नर मक्खियों में से किसी एक को चुनती है और उससे मिलती और चिपकती है। और तब अन्य कीड़े-मकोड़ों की तरह नर मक्खी के अंडकोषों से एक तरल पदार्थ बाहर निकलता है। यह नर मक्खी का वीर्य है। यह वीर्य एक पतली सी नली में होकर, एक छोटे से छिद्र द्वारा मादा मक्खी के शरीर में प्रवेश करता है। इस काम के लिए दोनों के शरीर में ही अलग से खास प्रकार की इन्द्रियाँ बनी होती हैं। नर मक्खी के शरीर से जो वीर्य निकलता है उसमें इतनी शक्ति होती है कि मादा मक्खी के लिए वह जिन्दगी भर के लिए काफी होता है। वीर्य को सुरक्षित रूप से रखने के लिए उसके शरीर में एक खास जगह होती है। वीर्य वहाँ रक्खा रहता है

शहद की मक्खियों का घर

और मक्खी जब तक जिन्दा रहती है तब तक बराबर उससे काम लेती रहती है।

नर मक्खी के संयोग से गर्भवती होने के बाद रानी मक्खी अपने दल के कुछ साथियों को लेकर तुरन्त ही एक नया छत्ता बनाना शुरू कर देती है और इस तरह अपना नया घर बसाती है। छत्ता बन जाने पर उसमें अपने अंडे देती है और जब तक जिन्दा रहती है बराबर यही कार्य करती रहती है। अंडे देने के सिवा उसे कुछ काम नहीं होता। और जानते हो, एक दिन मे वह कितने अंडे दे डालती है ? एक दिन मे वह तीन हजार से भी अधिक अंडे देती है। और जिन्दगी भर इसी प्रकार देती रहती है।

अंडे देते-देते जब वह बूढ़ी हो जाती है तो मजदूर मक्खियाँ उसे छत्ते से बाहर निकाल देती हैं और उसके स्थान पर दूसरी मक्खी को रानी के सिंहासन पर बिठालती हैं। मक्खी या चींटी के राज्य में बेकार जीव नहीं रह सकते।

छत्ते के सभी निवासियों का—नर और मादा मक्खियों का पालन-पोषण मजदूर ही करते हैं। रानी मक्खी अपने जीवन में हजारों लाखों अंडे रोज देती है। और चूंकि मजदूर मक्खी की आयु बहुत अल्प होती है इसलिए पुरानी की जगह नित्य नयी मजदूर मक्खियाँ तैयार होती रहती हैं। ये मक्खियाँ पूरे समाज

की सेवा करती हैं। रानी जो बच्चे देती है उनकी देख-भाल करना इनका मुख्य कार्य है।

बच्चों के पालन पोषण में मजदूर चींटियाँ बड़ी चतुर होती हैं। इस विषय में उनकी जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। रानी चींटी ज्यों ही अंडे देती है, त्यों ही दासियाँ उन अंडों को एक एक करके उठाती और घर के अलग अलग कमरों में ले जाकर रख देती हैं।

परन्तु वे इतने से ही निश्चिन्त नहीं हो जाती। वे इन अंडों की बराबर देख-भाल करती रहती हैं। जरूरत के मुताबिक उनको एक कमरे से दूसरे कमरे में ले जाती हैं, धूप दिखाती हैं, और शत्रु का आक्रमण होने पर उनको उठाकर सुरक्षित स्थान में ले जाती हैं। और इसके बाद जब अंडों से सुँडी निकलती हैं तो उनकी भी वे पूरी सेवा-सुश्रूषा करती हैं। उन्हें भोजन कराती हैं, उनके घर साफ करती हैं, और कागज सी पतली जिन झिल्लियों में वे बन्द रहती हैं, उन पर बराबर नजर रखती हैं, और जब चींटी के पूरे अवयव बन चुकते हैं, और वे बाहर निकलने के योग्य होती हैं, तो झिल्ली को धीरे से अलग करके वे उन्हें बाहर भी निकाल लेती हैं।

यह सब तो ठीक है। चींटियाँ या मक्खियाँ बड़ी चतुर होती हैं। उनकी सामाजिक व्यवस्था बड़ी विचित्र होती है।

परन्तु फिर भी हमें एक बात खटकती है। मधु-मक्खियों या चीटियों में अपनेपन का कोई भाव ही नहीं होता। मादा चींटी बच्चों के बाद बच्चे पैदा करती जाती है, और मजदूर चींटियाँ उनका लालन-पालन करने में लगी रहती हैं, जैसे कोई मशीन कार्य कर रही हो। हाँ, चींटियों के साम्राज्य में सारा कार्य मशीन की तरह ही होता है, बिना किसी गलती के, बिना किसी भूल-चूक के और एक दूसरे के प्रति बिना प्रेम और स्नेह की भावना के। एक दूसरे का उन्हें बिलकुल ख्याल नहीं होता। उनके सारे कार्य समाज के लिए होते हैं। समाज के लिए ही वे जीवित रहती और समाज के लिए ही मरती हैं। इस विषय में वे इतनी कठोर और नियम की पक्की होती हैं कि कोई चींटी यदि समाज के अहित का काम करे तो उसे वे तुरन्त मार डालती हैं।

परन्तु चींटी रानी को अपने बच्चों से कोई प्रेम नहीं होता। वह उनको अपना नहीं समझती। यह बात हमें कुछ खट-कती सी है। क्यों न सन्तू ? वह मेढक हमें ज्यादा अच्छा मालूम होता है जो मेढकी के चले जाने के बाद भी अकेला अंडों की रखवाली करता है और उन्हें छोड़ कर नहीं जाता। अथवा वह घोंघा भी हमारे हृदय को ज्यादा आकृष्ट करता है जो देखने में तो बड़ा आलसी और गन्दा होता है, परन्तु जब तक अंडे बड़े नहीं हो जाते तब तक उनके पास ही बैठा रहता है।

चींटियों में इस बात की कमी होती है। वे भले ही घर बना कर रहती हों, भले ही वह बड़ी बुद्धिमान हों, भले ही उनके समाज की रचना बड़ी अद्भुत हो; परन्तु उनमें घरेलू वातावरण का बड़ा अभाव होता है। वे एक साथ मिलकर रहने का वह सुख अनुभव नहीं करतीं, जिसका अनुभव उच्च श्रेणी के अन्य जीव और मनुष्य करते हैं। उनके घर को हम सच्चा घर नहीं कह सकते।

तब सच्चा घर और परिवार हमें कहाँ मिलेगा? कहाँ माता-पिता और बच्चों को हम एक साथ रहते हुए देखेंगे? कहाँ हम घर में प्रेम का सोता बहता हुआ पायेंगे?

इसके लिए हमें चींटी और मक्खियों की समाज से विदा माँग कर एक कदम आगे बढ़ना पड़ेगा! जीव-जगत की एक और सीढ़ी हमें पार करनी होगी।

पन्द्रहवाँ अध्याय

परिवार की सृष्टि

क्या तुम्हें गौरेया का परिचय देने की जरूरत है, सन्तू ? जहाँ हम लोग बैठते हैं वहीं एक तसवीर के पीछे गौरेया ने अपना घोंसला बना रक्खा है। घोंसले में चार नन्हे बच्चे हैं। वे अभी उड नहीं सकते। अभी उनकी आँखें मुँदी हैं, और पखे भी नहीं बने हैं। परन्तु फिर भी उन्हे किसी बात की चिन्ता नहीं है। उनके मा बाप उनकी पूरी देख-भाल करते हैं। तुम रोज देखते हो कि गौरेया किस तरह उनके लिए चोंच में दाना लाती और उन्हें चुगाती है। मा की आहट पाते ही बच्चे चूँ ! चूँ ! करके भोजन के लिए अधीर हो उठते हैं, और चोंच खोल देते हैं। चिरैया अक्सर बडी-बडी इल्लियाँ पकड कर लाती है, जिन्हें वे बडे शौक से खाते हैं। दाना चुगा कर वह उड जाती है और थोडी देर में फिर आती है। इस तरह वह अपने बच्चों की बराबर खबर लिये रहती है।

आज कल एक गौरैया मेरे कमरे में भी घोंसला बना रही है। दीवार में ऊपर की तरफ एक छेद है। उसे वही जगह पसन्द आ गयी है। चिरैया और चिरौटा दोनों ही घोंसला बनाने में लगे रहते हैं। मानो उन्हें और कुछ काम ही नहीं है। घास, फूस, चिथड़े, कागज, रुई—जो कुछ भी मिलता है सो लाकर इकट्ठा करते रहते हैं, जिसकी वजह से अक्सर मुझे बड़ी दिक्कत होती है। मैं अपना काम नहीं कर पाता। परन्तु उन्हें इस बात की जरा भी परवा नहीं कि हम क्या कर रहे हैं, अथवा हमने कहाँ बसेरा डाल रक्खा है। पंखे या कूर्निस पर बैठ कर दिन भर शोर करती रहती हैं और कमरे को भी घास-फूस से गन्दा कर देती हैं। उनकी इस आदत से तंग आकर नौकर ने तो एक दिन घोंसले को निकाल कर ही फेंक दिया। चिड़ियों को इसका अवश्य बड़ा दुःख हुआ होगा। परन्तु अपनी आदत से वे फिर भी बाज़ नहीं आयीं। जगह छोड़ना तो दूर रहा, तेजी से दूसरा घोंसला बनाने में लग गयीं।

मादा अब शीघ्र ही अंडे देगी। यह उसी की तैयारी है। गौरैया अक्सर फरवरी से जून तक अंडे देती है। एक दफे में पांच छः अंडे दिये जाते हैं। देखने में वे सुन्दर होते हैं। उनका रंग हरा, कभी पीला, और कभी भूरा रहता है। ऊपर कुछ काली-काली चित्तियाँ होती हैं। अंडे देने के बाद मादा घोंसले को कभी सूना नहीं छोड़ती। बराबर उसकी रखवाली करती रहती

है। यहाँ तक कि भूख-प्यास की भी परवा नहीं करतीं। मादा को अगर उठकर जाना भी पड़े तो उसकी जगह चिरौटा आकर बैठता है। बीच-बीच में चिरौटा आता है, और अपनी स्त्री से मानो प्रेम-पूर्वक कहता है—"अच्छा, अब तुम बैठे-बैठे थक गयी होगी और तुम्हें भूख भी लगी होगी। इसलिए अब तुम जाओ, तुम्हारी जगह में अंडों की सँभाल करता हूँ।" तब चिरैया उड़ जाती है और उसकी जगह चिरौटा अंडों के पास बैठता है।

परन्तु क्या चिरैया और चिरौटा को तुम पहचानते भी हो? वह देखो, वह नर है। सिर का ऊपरी हिस्सा भूरा, सफ़ेद से गाल और चोंच से लेकर छाती तक एक काली धारी। पंख कुछ सफ़ेद, कुछ बादामी, और कुछ भूरे से।

और पास ही तुम जो दूसरी चिड़िया देख रहे हो, जिसका रंग कुछ भूरा या मटमैला है, और बीच में एक सफ़ेद धारी सी है, वह मादा है।

जब तक घोंसले में बच्चे रहते हैं चिरैया और चिरौटा किसी को पास नहीं आने देते। किसी शत्रु के निकट होने पर वे ज़ोर से बार-बार चूँ! चूँ! करके अपनी घबराहट प्रकट करते हैं और कभी-कभी क्रोध भी दिखाते हैं। फिर भी यदि कोई उनके अंडे उठा ले जाये, अथवा खा जाये, तो इसका खास कर चिरैया को बड़ा दुःख

वह फिर भी नहीं लौटती तो उसकी अनुपस्थित मे अकेले ही बच्चों का पालन-पोषण करता है।

परन्तु ऐसा बहुत कम होता है। जब तक घोंसले में बच्चे रहते हैं तब तक नर और मादा एक दूसरे से बहुत कम अलग होते हैं। कभी-कभी तो वे साल भर तक एक साथ रहते और मिल कर अपनी गृहस्थी सँभालते है। उसके बाद दोनों ही अलग

होता है। कभी-कभी तो बच्चों के वियोग में वह खाना-पीना भी छोड़ बैठती है।

इतना ही नहीं। चिरैया और चिरौटा अपने बच्चों से ही प्यार नहीं करते। उनमें आपस में भी बड़ा प्रेम होता है। वे हमेशा एक साथ रहते हैं। कम से कम उस समय तक तो रहते ही हैं जब तक बच्चे घोंसले के बाहर निकल कर उड़ने के योग्य नहीं हो जाते। इसी बीच मे यदि कोई दूसरा चिरौटा चिरैया को फुसला कर अपने घर ले जाये तो पहले चिरौटे को इसका बड़ा दुःख होता है। वह उस दूसरे चिरौटे से लड़ता और अपनी स्त्री को वापिस लाने की कोशिश करता है। परन्तु जब

वह फिर भी नहीं लौटती तो उसकी अनुपस्थित में अकेले ही बच्चों का पालन-पोषण करता है।

परन्तु ऐसा बहुत कम होता है। जब तक घोंसले में बच्चे रहते हैं तब तक नर और मादा एक दूसरे से बहुत कम अलग होते हैं। कभी-कभी तो ये साल भर तक एक साथ रहते और मिल कर अपनी गृहस्थी सँभालते हैं। उसके बाद दोनों ही अलग होकर अपना नया जोड़ा तलाश कर लेते हैं। परन्तु गौरैया ही क्यों, सभी पक्षी आपस में प्रेम-पूर्वक रहना जानते हैं।

यह कौआ भी, जो देखने में इतना काला कलूटा, और जिसकी आवाज़ इतनी कर्कश है, अपनी स्त्री को, अपने बाल-बच्चों को, बहुत प्यार करता है। सन्तान-प्रेम की यह कोमल और सुन्दर भावना उसमें भी मौजूद है!

आजकल मैं इस बबूल के पेड़ पर रोज़ कौए के एक जोड़े को बैठा देखता हूँ। मालूम होता है इनके घोंसले में अडे रक्खे हैं। इसीलिए ये बराबर यहाँ बैठे रहते हैं। कौए भी जनवरी या फ़रवरी के बाद ही घोंसला बनाना शुरू करते हैं। नर और मादा दोनों इस काम में एक दूसरे की मदद करते हैं। परन्तु घोंसला बनाने का काम प्रायः मादा ही करती है। इसके लिए खास कर डंठल और टहनियाँ जुटायी जाती हैं और भीतर नरम घास या बालों का बिछावन किया जाता है। प्रायः दो दिन इस कार्य में

लगते हैं। फिर मादा अंडे देती है। इनकी संख्या प्रायः चार-पाँच होती है। देखने में ये बड़े विचित्र होते हैं। अंडा देने के बाद कौए अपने घोंसले को सूना नहीं छोड़ते और जब बच्चे निकलते हैं तो गौरैया की तरह बड़ी सावधानी से उनकी परवरिश करते हैं।

और तुम जो यह काला सा पक्षी देख रहे हो, जिसकी पूँछ लम्बी और दो सिरों वाली है—मानो बीच से चीर दी गयी हो—यह भुजंगा है। यह तो अपने घोंसले के पास किसी को आने तक नहीं देता। घोंसला बनाने के दिनों में इसका मिजाज इतना गर्म रहता है कि अपने वृक्ष पर, या उसके आसपास कौए या चील को देख ले तो उसे ठुकराए बिना न रहे। एक किताब में मैंने पढ़ा है कि एक दफे एक सज्जन ने भुजंगा का घोंसला देखने की चेष्टा की। नतीजा यह हुआ कि उसकी चोंच की ठोकर से उनका सिर फूटते-फूटते बचा। इतने से ही तुम समझ सकते हो कि भुजंगा अपने बच्चों की कितनी हिफाजत करता है।

और तुम्हें याद है सन्तू, उस दिन मैंने तुम्हें कबूतर के अंडे दिखाये थे। मादा एक बार में दो सफेद से अंडे देती है। उनकी वह बराबर रखवाली करती है। बच्चे देखने में बड़े कुरूप होते हैं। परों का उनपर कहीं नाम निशान भी नहीं होता। और वे

बहुत समय तक उड़ने के लायक नहीं होते। परन्तु मा-बाप उनका पालन-पोषण करते हैं। जब तक वे स्वयम् उड़ने

और अपना भोजन तलाश करने के योग्य नहीं हो जाते तब तक उनका साथ नहीं छोड़ते।

इसके अतिरिक्त कबूतर और कबूतरी में भी आपस में बड़ा प्रेम होता है। कबूतर अपनी स्त्री का साथ बहुत कम छोड़ता है। कभी-कभी तो वे जीवन भर एक दूसरे के साथ रहते और गृहस्थी चलाते हैं।

और, क्या तुमने नदी किनारे सारस के उस जोड़े को भी देखा है जो रोज़ सुबह मछलियों की तलाश मे वहाँ आकर बैठता है। सारस का जोडा अपने प्रेम के लिए प्रसिद्ध है। इन दोनों को म हमेशा एक साथ देखोगे। सारस और सारसी एक साथ रहते हैं। और इस तरह एक दूसरे से बातें करते नजर आते हैं, मानो उनकी भाषा हमारी समझ में आ रही है। सारस का जोड़ा कभी एक दूसरे से अलग नहीं होता और ऐसी अनेक घटनाएँ प्रसिद्ध हैं जब किसी नासमझ आदमी ने सारसी पर गोली चला दी। नतीजा यह हुआ कि सारस अकेला नहीं रह सका। अपनी स्त्री के वियोग में तड़प-तड़प कर मर गया।

हंस, कबूतर, तोता, तीतर आदि अनेक पक्षी इस प्रकार जोड़ा बना कर रहते हैं। उनमें आपस में बड़ा प्रेम होता है। नर और मादा जीवन भर एक दूसरे से अलग नहीं होते।

अन्य जंगली चिड़ियाँ प्रति वर्ष अपना नया घर बसाती हैं। अर्थात् नर और मादा हर साल अपना नया जोड़ा तलाश करते हैं। परन्तु फिर भी एक बार मित्रता स्थापित हो जाने पर—

एक बार घर बसाने की बात तय हो जाने पर—वे तुरन्त ही काम में जुट जाते हैं। और उस समय तक एक दूसरे से अलग नहीं होते जब तक घोंसला बन कर तैयार नहीं होजाता, मादा अंडा नहीं दे लेती, अंडों से बच्चे नहीं निकल आते और बच्चे स्वयम् उड़ने और भोजन की तलाश करने के योग्य नहीं हो जाते। इस बीच में दोनों बड़े प्रेम से रहते हैं। कभी एक दूसरे को धोखा नहीं देते और दूसरी चिड़ियों से जाकर नहीं मिलते।

यह बात प्रायः सभी पक्षियों में देखने में आती है। प्रायः सभी पक्षी जोड़ा बना कर रहते हैं। और बहुत दिनों तक एक दूसरे से अलग नहीं होते।

मुर्गी और उसके बच्चे

कुछ पालतू चिड़ियों ने अवश्य अपना यह गुण छोड़ दिया है। उदाहरण के लिए मुर्गी अपने छोटे बच्चों की देख-भाल करती है; हमेशा उनके साथ रहती और उनकी रखवाली करती है। इतना ही नहीं। वह बच्चों को

दाना चुगना, पानी पीना, उड़ना, आदि बातें भी सिखाती है। परन्तु उन बच्चों के साथ मुर्ग़ नहीं होता। अकेली मुर्गी ही उन का पालन-पोषण करती है। इसका कारण यह है कि अंडों के लिए लोग अकसर बहुत सी मुर्गियाँ पालते हैं। मुर्गियों के बीच में केवल एक दो मुर्ग होते हैं। और उनके द्वारा ही सब मुर्गियाँ गर्भवती होती रहती हैं। तुम कह सकते हो कि एक ही मुर्ग के बहुत सी स्त्रियाँ होती हैं। वह किसी एक स्त्री के पास नहीं रह पाता। नतीजा यह होता है कि एक ही पिता के द्वारा अलग-अलग मुर्गियों के गर्भ से बहुत से बच्चे पैदा होते हैं। और वे बच्चे अपनी मा को तो पहचानते हैं, परन्तु पिता से उनका कोई परिचय नहीं होता। वे पितृहीन रहते हैं। और मुर्गी को भी अकेला ही रहना पड़ता है। उसका पति उसके पास नहीं रह पाता।

बाकी सभी जंगली चिड़िया जोड़ा बनाकर रहती हैं; मिलकर अपना घर बनाती, अंडे सेती, और उनकी परवरिश करती हैं। परन्तु फिर भी एक चिड़िया ऐसी है जो स्वयम् न तो अपना घोंसला ही बनाती है, और न अपने अंडे ही सेती है। और वह कोयल है। तुम शायद जानते होगे कि कोयल अपने अंडे आप नहीं सेती। कौओं से वेगार कराके अपना काम निकालती है। यह वेगार वह उनसे धोखा देकर ही कराती है।

मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि इस विषय में वह कैसी धूर्तता से काम लेती है। एक लेखक ने पक्षियों-सम्बन्धी अपनी किताब में इसका बड़ा अच्छा वर्णन किया है।

नर और मादा कोयल पहले यह निश्चय करते हैं कि किस कौए की आँखों मे धूल झोंकना है। निश्चय होते ही नर उसी पेड़ पर जा बैठता है और अपना राग अलापने लगता है। कौए कोयल से यों ही जलते है। देखते ही उस पर टूट पड़ते हैं और उसका पीछा करने लगते हैं। क्रोध के मारे थोड़ी देर के लिए वे अपनी सारी होशियारी भूल जाते हैं और घोंसले को सूना छोड़ कर नर और मादा दोनों ही उस कोयल के पीछे निकल पड़ते हैं।

और मादा कोयल को ज्यों ही इस बात का पता चलता है, वह फौरन ही कौओं के घोंसले में जाकर अपना अंडा रख देती है। मौका मिला तो उनका एकाध अंडा नीचे भी गिरा देती है या चोंच में दबा कर साथ लेती आती है।

इधर कौए जब लौट कर आते हैं तो उन्हें कोई सन्देह नहीं होता कि घोंसले में कुछ गोलमाल हुआ है। यद्यपि आकार प्रकार में कौए का अंडा कोयल के अंडे से भिन्न होता है, परन्तु फिर भी कौए की आँखों पर पर्दा-सा पड़ जाता है। अंडे से कोयल का बच्चा निकलने पर भी उनको कुछ शक नहीं होता। चुनचुन कर दाना लाते और उसे खिलाते रहते हैं।

कोयल की इस कारिस्तानी के लिए हम उसकी प्रसंशा नहीं कर सकते, बल्कि उससे घृणा करने को जी चाहता है। यह कहाँ की भलमनसाहत है कि स्वयम् कष्ट से बचने के लिए अपने बच्चों को दूसरे के घोंसले में ले जाकर रख दिया जाय और दूसरे के बच्चों को फेंक दिया जाय?

अन्य पक्षी ऐसा नहीं करते। वे अपने बच्चों को दूसरे के आसरे पर नहीं छोड़ते, बल्कि उनका स्वयम् पालन-पोषण करते हैं।

सन्तान-प्रेम की यह भावना सभी पक्षियों में स्वाभाविक रूप से पायी जाती है।

चिड़ियाँ मछली या मेढक की अपेक्षा बहुत कम अंडे देती हैं। संख्या में वे ५-६ अंडे से अधिक नहीं होते। कुछ चिड़ियाँ तो इससे भी कम अंडे देती हैं। अतएव वंश-रक्षा के उद्देश्य को पूरा करने के लिए प्रकृति ने उनके मन में प्रेम और वात्सल्य की ऐसी भावना पैदा कर रक्खी है जिसके वशीभूत होकर चिड़ियाँ अपने बच्चों को अपना समझतीं और उनका पालन-पोषण करती हैं।

———

सोलहवाँ अध्याय

चिड़ियों में सन्तानोत्पत्ति

चिड़ियों का जब अंडे देने का समय आता है तो नर और मादा स्वाभाविक रूप से ही एक दूसरे से मिलने के लिए व्याकुल हो उठते हैं। इन दिनों उनके रूप-रंग में बड़ा परिवर्तन हो जाता है। पंखे अधिक चमकीले हो जाते हैं। गले में एक तरह का सुरीलापन आ जाता है। नर विशेष रूप से खूबसूरत हो जाता है और मादा को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए तरह-तरह की तरकीबें करता है।

जिस मादा को वह प्रेम करता है उसके सामने नाचता है, अपने पखे फुलाता है, उसे अपना मधुर संगीत सुनाता है और दूसरी नर चिड़ियों को युद्ध में पराजित करके अपनी भावी पत्नी को अपनी बहादुरी भी दिखाता है। एक मादा के लिए अक्सर कई नर चिड़ियों में लड़ाई छिड़ जाती है। युद्ध में जो विजयी होता है मादा उसी को अपना वर

चुन लेती हैं और तब यह नर और मादा आपस में मिल कर रहने लगते हैं।

सन्तानोत्पत्ति के लिए चिड़ियों में वैसी ही इन्द्रियाँ होती हैं जैसी अन्य जीव-जन्तुओं में। इसकी हम चर्चा कर चुके हैं। नर के शरीर में एक प्रकार की ग्रन्थियाँ होती हैं जिनमें वीर्य बनता है। इन्हें हम *अंड-कोष* कहते हैं। अंड-कोषों में से वीर्य ले जाने के लिए छोटी नलियाँ होती हैं जो *वीर्यवाहिनी नलियाँ* कहलाती हैं। ये नलियाँ मल-द्वार से, जिसके द्वारा वीर्य मादा के शरीर में पहुँचता है, मिली रहती हैं। परन्तु कुछ चिड़ियों में इस काम के लिए एक विशेष प्रकार की इन्द्रिय होती है, जिसे हम *पुरुषेन्द्रिय* कहते हैं।

मादा के शरीर में *रज-ग्रन्थि* होती है, जिसमें रज बनता है। और एक नली होती है, जहाँ रज के साथ वीर्य का संयोग होता है। यह नली मादा चिड़िया के मल-द्वार से जाकर मिलती है। इसके द्वारा ही नर चिड़िया का वीर्य मादा के शरीर में पहुँच कर रज-कणों को संजीवित करता है। मादा तब गर्भवती हो जाती है और रज-कोष बढ़ते हैं। रज-कोषों में स्वयम् बढ़ने की शक्ति नहीं होती। नर के वीर्य से मिलने पर ही उनमें यह शक्ति आती है। यह बात मैं तुम्हें फूलों का उदाहरण देकर बराबर समझाता आ रहा हूँ।

वीर्य बिलकुल वही चीज है जो फूलों का पराग। पराग के मिलने से जिस तरह फूल के रज-कोष बढ़ने लगते हैं और बीज का रूप धारण कर लेते हैं, ठीक उसी तरह चिड़ियों के अन्दर भी मादा के रज के साथ नर के वीर्य का संयोग होने से, रज-कण बढ़ने लगते हैं, और समय पाकर अंडे के रूप में चिड़िया के शरीर से बाहर निकलते हैं।

इस प्रकार तुम बीज के साथ चिड़िया के अंडे की तुलना कर सकते हो। मैंने तुमसे बीजों की चर्चा करते हुए एक दिन शायद कहा भी था कि एक बीज और चिड़िया के अंडे मे मेरे लिए विशेष अन्तर नहीं है। जो वृक्ष का बीज है, वही चिड़िया का अंडा भी है। दोनों एक ही चीजें हैं। बीज को उत्पन्न करने के लिए जो इन्तजाम फूलों में है, वही चिड़ियों के अन्दर भी है। पराग और रजकण के मिलने से जिस तरह बीज बनता है और समय पाकर उगता और बढ़ता है, ठीक उसी तरह वीर्य और रज के संयोग से चिड़िया का अंडा भी बनता है, और
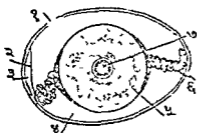
मुर्गी का अंडा

१. छिलका। २. नीचे की बारीक झिल्ली। ३. हवादानी। ४. अंडे की सफेदी। ५. चर्बी। ६. नाल, जिससे चूजा बँधा रहता है। ७. बीज रूप में चूजा।

समय पाकर बच्चे को जन्म देता है। बीज जिस प्रकार बढ़ता है, उसी प्रकार यह अंडा भी बढ़ता है। वास्तव में अडे को तुम चिड़िया का बीज कह सकते हो। क्या तुमने कभी मुर्गी का अंडा देखा है? ऊपर वैसा ही छिलका, भीतर भोजन की वैसी ही सामग्री और उसके भीतर सूक्ष्म रूप में वैसा ही एक भ्रूण जो एक दिन पूरा बचा बनकर अडे के बाहर निकलता है। यह सब मैं तुम्हे कभी दिखाऊँगा। परन्तु अभी इस तसवीर से तुम बीज और अडे के इस सादृश्य को भली भाँति समझ सकते हो।

यदि तुम मुर्गी के ताजे अडे को तोड़कर देखो तो उसके भीतर पहले तो तुम्हें सफेद रंग का एक तरल पदार्थ मिलेगा, फिर एक पीला पदार्थ और उसके बीचोंबीच बीज रूप मे एक सूक्ष्म जीवित पदार्थ। यही मुर्गी का अविकसित बच्चा है।

मा के पेट से बाहर निकलने के बाद अडों से फौरन बच्चे नहीं निकलते। भ्रूण के विकास के लिए समय चाहिए। मुर्गी के अंडों से २१ दिन मे चूज़े या बच्चे निकलते हैं और कबूतर के अंडों से १४ दिन में। अलग-अलग चिड़ियों के बच्चे अलग-अलग समय में अंडों से बाहर निकलते हैं।

और ये बचे तभी पूरे तैयार होकर बाहर निकलते हैं जब उन्हें हवा और गरमी बराबर मिलती रहे। मुर्गी के अंडे के इस चित्र में तुम देख सकते हो कि वहाँ हवा और भोजन का काफी

अंडे के भीतर चूजे का क्रमिक विकास

(१) बीज रूप में मुर्गी का चूजा (६) करीब करीब तैयार चूजा
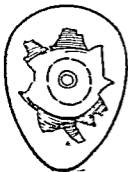
प्रबन्ध होता है। रही गरमी की बात, सो वह उसे मा के शरीर से मिलती है। अडे देने के बाद मा उन्हें परों से ढके बैठी रहती है। कभी-कभी यह कार्य नर भी करता है। इस तरह चिड़िया के बदन से अडो को बराबर एक सी गरमी मिलती रहती है। इसे ही हम अडों का सेना कहते हैं।

रज-कोष मुलायम होते हैं। परन्तु नर के वीर्य के मिलने से वे बढ़ने लगते हैं, और उनके ऊपर का छिलका कठोर हो जाता है। बढ़ चुकने के बाद अडे मादा चिड़िया के मलद्वार से बाहर निकलते हैं। अर्थात् चिड़िया के शरीर में अंडा देने और मल-मूत्र त्यागने के लिए एक ही रास्ता होता है। चिरौंटे का वीर्य भी इसी रास्ते से उसके शरीर में प्रवेश करता है। इस कार्य के लिए उस के अलग इन्द्रिय नहीं होती।

अनेक निम्नकोटि के जीवों में भी सन्तानोत्पत्ति के लिए ऐसी ही इन्द्रियाँ होती हैं। कभी-कभी तो नर का वीर्य भी मल-द्वार से बाहर निकल कर मादा के शरीर में पहुँचता है। क्योंकि इस कार्य के लिए नर के भी कोई अलग इन्द्रिय नहीं होती। मछली और मकड़ी आदि में ऐसा ही प्रबन्ध होता है। इस दृष्टि से चिड़ियों की तुलना हम इन जीवों से कर सकते हैं। परन्तु मक्खी, मच्छर, चींटी, तितली आदि में, वीर्य और रज के निकलने के लिए अलग रास्ते होते हैं।

अतएव इस विषय में चिड़ियों की तुलना इनके साथ नहीं की जा सकती, परन्तु वंश-वृद्धि का जो असली सिद्धान्त है वह सब जगह एक है। उसमें तुम कहीं कोई अन्तर नहीं पाओगे।

जन्म के समय सब चिड़ियों के बच्चे एक से नहीं होते। मुर्गी के चूजे अंडे से बाहर निकलते ही एक दो दिन के भीतर ही इधर-उधर घूमने और दाना चुगने के लायक हो जाते हैं, परन्तु गोरैया, कौआ, भुजंगा आदि पक्षी ऐसे हैं जिनके बच्चे जन्म के समय अन्धे से होते है। उनके पंखे नहीं होते और वे अपने आप दाना नहीं चुग सकते। इसलिए उनकी माता को उनकी पूरी देख-भाल करनी पड़ती है।

परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि मुर्गी को अपने बच्चों से कोई ममता नहीं होती। नहीं, वह अपने बच्चों को उतना ही प्यार करती है जितना अन्य चिड़ियाँ अपने बच्चों को। और जब तक वे काफी बड़े नहीं हो जाते तब तक वह बराबर उनके साथ रहती और उनकी रखवाली करती रहती है।

सत्रहवाँ अध्याय

बड़े जीवों में सन्तानोत्पत्ति

पक्षियों के बाद अब स्तनपायी जीवों का नम्बर है। स्तनपायी जीव वे हैं जो अपने बच्चों को दूध पिलाते हैं। गाय, भैंस, बकरी, बन्दर, बिल्ली और मनुष्य, ये सब स्तनपायी जीव हैं। इनकी माएँ बचपन में अपने बच्चों को दूध पिलाती है।

इसलिए हमारी कहानी अब—

"खतम हो रही है।"

"हाँ, कहानी अब खतम हो रही है। अब मैं तुम्हारे प्रश्न के असली जवाब के नजदीक पहुँच रहा हूँ। परन्तु मेरा विश्वास है कि तुम अपने प्रश्न का अधिकाश जवाब पा चुके हो। यह दूसरी बात है कि उस ओर तुमने ध्यान न दिया हो।"

ससार के समस्त जीव किन नियमों के वशीभूत होकर निरन्तर अपनी सन्तान वृद्धि करते रहते हैं, और इस उद्देश्य के

लिए प्रकृति कैसे उपाय काम में लाती है, यह बात अब तक तुम्हारी समझ में अच्छी तरह आ गयी होगी। वास्तव में वंश-वृद्धि के नियम सब जगह एक हैं। मादा के शरीर के एक छोटे कोष के साथ नर का एक छोटा सा कोष मिलता है और मादा के शरीर का वह कोष संजीवित होकर बढ़ने लगता है। सन्तानोत्पत्ति का यह सिद्धान्त सर्वत्र एक सा लागू है। परिस्थिति और भिन्न-भिन्न जीवों की आवश्यकता के अनुसार केवल तरीके बदलते गये हैं। ज्यों-ज्यों छोटे जीवों से बड़े जीवों का विकास होता गया त्यों-त्यों प्रकृति अपने तरीकों मे मानो उन्नति करती गयी है।

तुम देख चुके हो कि चिड़ियों की मा, जिस मार्ग से मल त्याग करती है, उसी मार्ग से अंडे भी देती है। सुनने मे यह बड़ा अजीब मालूम देता है, परन्तु इसमें हमें कोई गन्दगी नजर नहीं आती। हमारे मन मे कोई अस्वच्छता का भाव पैदा नहीं होता। क्योंकि हम जानते हैं कि एक तो अडे के भीतर अभी बच्चा बना ही नहीं और फिर सारी चीज एक मजबूत और सख्त खोल के भीतर इस प्रकार बन्द रहती है कि बाहर की गन्दगी का उस पर कुछ असर नहीं पड़ सकता।

स्तनपायी जीव अडे नहीं देते। उनके बच्चे अपनी असली हालत में गर्भ से बाहर निकलते हैं। इसलिए प्रकृति ने यहाँ सफाई का अधिक ध्यान रक्खा है। इन जीवों में बच्चों के बाहर

निकलने के लिए मलद्वार के पास ही अलग से एक मार्ग बना होता है।

स्तनपायी जीव अन्य जीवों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होते हैं। वे अपनी ज्ञानेन्द्रियों से अन्य जीवों की अपेक्षा अधिक काम लेना जानते हैं। इसलिए उनकी सन्तान अगर जन्म के समय बिलकुल ही असहाय और कमजोर हो तो उसका पालन-पोषण भी वे अधिक सावधानी से कर सकते हैं।

सच बात तो यह है कि अधिकांश स्तनपायी जीवों के बच्चे मा की सहायता के बिना मुश्किल से जीवित रहते हैं। मेढक, मछली आदि जीवों में यह बात नहीं है। उन के बच्चे अंडो से बाहर निकल कर स्वावलम्बी बन जाते हैं। उन्हें न मा की जरूरत होती है, न बाप की। परन्तु स्तनपायी जीवों के बच्चों को मा की जरूरत होती है।

क्या तुमने तुरन्त के पैदा हुए कुत्ते के बच्चे देखे हैं ?

"हाँ, हाँ मैंने देखे हैं। अभी जाड़ों में ही तो हमारी कुतिया ने तीन पिल्ले दिये थे। उन में से एक मर गया था। दो बाकी रहे थे। छोटे से पिल्ले। आँखें मुँदी हुईं। जब हम लोग जाते तो हमेशा कुतिया को वहाँ बैठा हुआ ही पाते थे।"

"ठीक है ! जब तक पिल्ले बड़े नहीं हो जाते तब तक कुतिया बराबर उनकी देख-भाल करती है, उन्हें दूध पिलाती है

और रात में उन्हें अपनी छाती से चिपका कर सुलाती है, ताकि वे गरम रहें।

परन्तु कुछ स्तनपायी जीव ऐसे भी हैं, जिनके बच्चे जन्म के समय इतने कमजोर और असहाय नहीं होते। गाय और बकरी के बच्चे पैदा होने के कुछ समय उपरान्त ही उछलने-कूदने के लायक़ हो जाते हैं। परन्तु भोजन के लिए फिर भी उन्हें मा के ही आश्रित रहना पड़ता है। इसके अलावा चिड़ियों और स्तन-पायी जीवों के बच्चों में एक और भेद है।

चिड़ियों के बच्चे अंडों के भीतर बन्द और अविकसित दशा में मा के गर्भ से बाहर निकलते हैं। मैं तुम्हें बता चुका हूँ कि जीव की इस अविकसित अवस्था को भ्रूण कहते हैं। इस की तुलना तुम बीज के भीतर छिपे हुए शिशु-वृक्ष से कर सकते हो। भ्रूण के चारों ओर जो पीला और सफेद पदार्थ होता है वह चिड़िया के बच्चे के लिए भोजन की सामग्री है। चिड़िया का बच्चा इस भोजन के सहारे जीवित रहकर ठीक उसी तरह धीरे-धीरे बढ़ता है—उसके पैर, पंख आदि ठीक उसी प्रकार धीरे-धीरे विकसित होते हैं—जिस प्रकार बीज के भीतर छिपे हुए शिशु-वृक्ष के अंकुर आदि निकलते हैं। बच्चा जब पूरा बन चुकता है तभी अंडे के बाहर निकलता है।

श्रौर रात में उन्हें अपनी छाती से चिपका कर सुलाती है, ताकि वे गरम रहें।

परन्तु कुछ स्तनपायी जीव ऐसे भी हैं, जिनके बच्चे जन्म के समय इतने कमज़ोर श्रौर असहाय नहीं होते। गाय श्रौर बकरी के बच्चे पैदा होने के कुछ समय उपरान्त ही उछलने-कूदने के लायक हो जाते हैं। परन्तु भोजन के लिए फिर भी उन्हें मा के ही आश्रित रहना पड़ता है। इसके अलावा चिड़ियों श्रौर स्तनपायी जीवों के बच्चों में एक श्रौर भेद है।

चिड़ियों के बच्चे अंडों के भीतर बन्द श्रौर अविकसित दशा में मा के गर्भ से बाहर निकलते हैं। मैं तुम्हें बता चुका हूँ कि जीव की इस अविकसित अवस्था को भ्रूण कहते हैं। इस की तुलना तुम बीज के भीतर छिपे हुए शिशु-वृक्ष से कर सकते हो। भ्रूण के चारों श्रोर जो पीला श्रौर सफेद पदार्थ होता है वह चिड़िया के बच्चे के लिए भोजन की सामग्री है। चिड़िया का बच्चा इस भोजन के सहारे जीवित रहकर ठीक उसी तरह धीरे-धीरे बढ़ता है—उसके पैर, पंख आदि ठीक उसी प्रकार धीरे-धीरे विकसित होते हैं—जिस प्रकार बीज के भीतर छिपे हुए शिशु-वृक्ष के अंकुर आदि निकलते हैं। बच्चा जब पूरा बन चुकता है तभी अंडे के बाहर निकलता है।

परन्तु स्तनपायी जीवों के बच्चे पूर्ण विकसित अवस्था में ही मा के गर्भ से बाहर निकलते हैं और वे किसी अंडे के भीतर बन्द नहीं रहते। बल्कि माता पिता की तरह ही छोटे से सजीव प्राणी होते हैं। परन्तु वे इतने छोटे और कमजोर होते हैं कि जन्म के बाद तुरन्त ही उनकी देख-भाल करने की अत्यन्त आवश्यकता होती है। इसलिए तुम देखोगे कि स्तनपायी जीवों में स्वाभाविक रूप से ही सन्तान-प्रेम की मात्रा अन्य जीवों से कहीं अधिक होती है।

कुछ स्तन पायी जीव ऐसे भी हैं जिनके बच्चे जन्म के समय बहुत ही कमजोर होते हैं, उनके अवयवों के पूर्ण विकास में अब भी कमी होती है। इसीलिए उनके पालन-पोषण के लिए मा के पेट में एक थैली बनी होती है। पैदा होते ही बच्चा अपने आप इस में रेंग जाता है और बड़ा होकर बाहर निकलता है। थैली के भीतर वह मा का दूध पीता रहता है।

चिड़ियों के बच्चे एक सख्त खोल के अन्दर बन्द होकर बाहर निकलते हैं। परन्तु स्तनपायी जीवों के बच्चे मा के पेट में ही एक मुलायम थैली के अन्दर बन्द रहते हैं। वहाँ वह धीरे-धीरे बढ़ते और समय आने पर गर्भ से बाहर निकलते हैं।

मा के पेट में उनके भोजन का पूरा प्रबन्ध होता है। यहाँ तक कि साँस लेने के लिए हवा भी मिलती रहती है। मा जो कुछ

अकबर का दरबार

यह द्विगर्भकोषी स्तनपायी कंगारू का चित्र है। यह जीव
आस्ट्रेलिया में पाया जाता है। इसके पेट में एक
थैली होती है जिसमें इसका बच्चा पल कर
बड़ा होता है।

खाती है उससे रुधिर बनता है, और उस रुधिर के एक अंश से गर्भ के बालक का पोषण होता है। उसके बाद बच्चा जब पैदा हो जाता है तो मा उसे अपना दूध पिलाती है। क्योंकि वह और कोई चीज नहीं खा सकता। यह दूध भी मा के स्तनों में उसके रुधिर से तैयार होता है। मा अपने शरीर के रुधिर से बालक को पालती है। बालक के लिए मा इसीलिए इतनी बड़ी चीज है।

कुछ छोटे जानवर बिल्ली, कुत्ता, आदि एक दफे मे कई बच्चे देते हैं। परन्तु बड़े जानवरों के—गाय, भैंस, घोडा आदि के—एक दफे मे एक ही बच्चा पैदा होता है।

इसका कारण यह है कि कुत्ता, बिल्ली आदि छोटे जानवरों की जो मादा होती हैं, नर के वीर्य से उनके शरीर के कई रजकोष एक साथ संजीवित हो जाते हैं। बड़े जानवरो मे ऐसा नहीं होता और यदि होता भी है तो बहुत कम।

इस विषय में अन्य स्तनपायी जीवों और मनुष्यों में इतना कम अन्तर है कि अब हम अपना ही जिक्र क्यों न करें?

क्यों न सन्तू?

———

अठारहवाँ अध्याय

मनुष्यों में सन्तानोत्पत्ति

हम सब लोग एक दिन बहुत छोटे थे और अन्य जीवों के बच्चों की तरह एक सूक्ष्म रज-कोष के रूप में अपनी मा के गर्भ में बन्द थे। यह रज-कोष अन्य रजकोषों के साथ मा के शरीर की रज-ग्रन्थियों में पैदा होता है। ये रज-कोष प्रति मास ही बनते रहते हैं। यद्यपि संख्या में ये बहुत होते हैं, परन्तु एक समय में रज का एक कोष ही संजीवित होकर बढ़ता है।

रज-ग्रन्थियों से बाहर निकल कर रज के ये कण एक छोटी सी कोठरी या थैली में पहुँचते हैं जहाँ पुरुष के वीर्य से इनका संयोग होता है। इस थैली को *गर्भाशय* कहते हैं।

रजकण के संजीवित होने से *मा के गर्भ रह जाता है।* यदि वह संजीवित नहीं हुआ तो गर्भाशय से नीचे उतर कर जननेन्द्रिय के मार्ग से सबके सब रजकोष बाहर निकल

जाते हैं। मा की यह जननेन्द्रिय मलद्वार के पास एक अत्यन्त सुरक्षित स्थान में होती है और चमड़े की मुलायम तहों से ढकी रहती है।

रज के बाहर निकलते समय गर्भाशय की दीवारों से कुछ रुधिर भी बाहर निकल पड़ता है। इसलिए रज निकलने में मा को बहुधा कष्ट होता है। साथ ही रुधिर निकलने की वजह से वह कुछ कमजोर भी हो जाती है। चौदह पन्द्रह साल की अवस्था में लड़कियों के बहुधा रज निकलना शुरू हो जाता है। इसका यह अर्थ है कि वे सन्तान पैदा करने के योग्य हो रही हैं। परन्तु अभी उनके स्नायु इतने पुष्ट नहीं हो पाते हैं कि उनसे अभी से सन्तानोत्पत्ति का काम लिया जा सके।

रज निकलने के दिनों मे काफी सफाई से रहने की आवश्यकता होती है। गन्दे रहने से कभी-कभी रुधिर अधिक निकलने लगता है और उससे स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है।

रजस्वला होने के बाद—रजस्वला का अर्थ है ऐसी लड़की जिसके शरीर मे रज का बनना शुरू हो गया हो—रजस्वला होने के बाद लड़कियों के अंग-प्रत्यंग और अधिक पुष्ट होने लगते हैं। स्तन बढ़ने लगते हैं। कमर के नीचे का भाग मजबूत होने लगता है। इस सब का मतलब यह है कि वह अब प्रकृति के महान उद्देश्य को पूरा करने के योग्य हो गयी है।

तब उसका विवाह होता है। वह अपने पति के घर जाती है। वहाँ पति और पत्नी एक दूसरे को प्रेम करते और साथ रहते हैं।

और तब पति के मन में पत्नी से मिलने और उसकी मातृशक्ति के साथ अपनी जनन-शक्ति का संयोग करने की एक अदम्य इच्छा जाग्रत हो उठती है। वंश वृद्धि की यह स्वाभाविक प्रेरणा जो सभी जीवों में समान रूप से होती है स्त्री और पुरुष के प्रेम-सम्पर्क से यहाँ वह एक अतीव पवित्र और सुन्दर चीज बन जाती है।

सामने से बगल से

मनुष्य का वीर्य-कीट

२००० गुना बढ़ाया हुआ

पति अपनी पत्नी से प्रेमपूर्वक मिलता है और उसके शरीर में अपने वीर्य का संचार कर देता है। पति और पत्नी का यह मिलन एक अद्भुत चीज है। इस मिलने में पति और पत्नी का शरीर ही एक नहीं होता, बल्कि इनके मन भी मिलकर एक हो जाते हैं। स्वस्थ और बलिष्ठ

आदमी के वीर्य में अत्यन्त सूक्ष्म कीटाणु होते हैं, जो उसके शरीर का ही एक अंग हैं। ये *वीर्य-कोष* कहलाते हैं।

इन कोषों के मुंड और एक चंचल पूँछ होती है। मुंड करीब एक इंच का दस हज़ारवाँ और पूँछ क़रीब पाँच हज़ारवाँ भाग लम्बी होती है। जो आदमी जितना स्वस्थ होता है उसके कीटाणु उतने ही स्वस्थ और स्फूर्तिवान होते हैं और संख्या में भी वे उतने ही अधिक होते हैं।

मेरे पास एक अँगरेज़ी किताब है। इसमें मनुष्य के वीर्य-कोष का चित्र दिया हुआ है। यहाँ यह खूब बढ़ाकर दिखाया गया है। इससे तुम मनुष्य के इस कोष की बनावट का अन्दाज़ लगा सकते हो।

और यह देखो इस दूसरे चित्र (अगले पृष्ठ पर) में अन्य जीवधारियों के वीर्यकोष भी दिखाये गये हैं। तुम देखोगे कि ये एक दूसरे से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं।

स्त्री के शरीर में पहुँचते ही वीर्य-कोष तेज़ी से अपने रास्ते पर आगे बढ़ते, और जाकर गर्भाशय में पहुँचते हैं। वहाँ पहुँचने के लिए जननेन्द्रिय में होकर ही एक मार्ग होता है।

वीर्य पुरुष की इन्द्रिय के द्वारा ही स्त्री के शरीर में पहुँचता है। स्त्री के शरीर में इस काम के लिए जो खास जगह बनी होती है, उसे ही हम *जननेन्द्रिय* या *योनि* कहते हैं। इस काम के लिए

पत और पत्नी जब आपस में मिलते हैं तो दोनों को ही एक विशेष प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है। यदि ऐसा न हो तो प्रकृति के महान उद्देश्य को पूरा करने के लिए वे आपस में मिलें ही क्यों ?
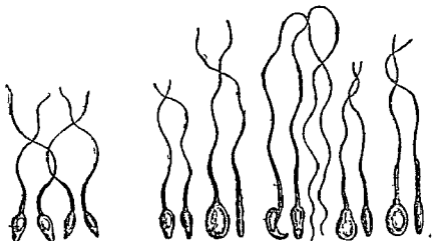
मनुष्य बनमानुस खरगोश चूहा कुत्ता सुअर

विभिन्न स्तनपायी जीवों के वीर्यकोष जो काफ़ी बड़ा कर दिखाये गये हैं।

वीर्य यद्यपि मूत्रेन्द्रिय के मार्ग से बाहर निकलता है, परन्तु शरीर के भीतर इसके आने के लिए एक बिलकुल ही दूसरा रास्ता बना हुआ है जो अंडकोषों से जाकर मिलता है। वीर्य अंडकोषों के भीतर ही तैयार होता है। परन्तु वह हमेशा तैयार नहीं होता रहता और न किसी एक जगह भरा ही रहता है। वह तो आ-

वश्यकता पड़ने पर तैयार होकर बाहर निकलता है। आँसू भी हमारी आँखों के अन्दर किसी एक जगह नहीं भरे रहते, बल्कि हमें जब रोना आता है तभी वे तैयार होकर आँखों के मार्ग से बाहर निकलने लगते हैं।

स्त्री के शरीर के भीतर पहुँचकर गर्भाशय में वीर्य और रज का मिलन होता है। परन्तु यह कोई आवश्यक बात नहीं है। रज यदि इसके पहले ही गर्भाशय से बाहर निकल गया हो, अथवा अभी रज-ग्रन्थियों के भीतर तैयार ही न हुआ हो, तो वीर्य के साथ

एक वीर्य-कोष रज-कोष के भीतर जाकर मिल रहा है

इसका संयोग नहीं हो पाता। ऐसी दशा में वीर्य-कोष नष्ट हो जाते हैं। परन्तु संयोग हो जाने पर—वीर्य के साथ रज-कोष का मेल हो जाने पर—अन्य जीवों में जो होता है, वही यहाँ भी देखने को मिलता है। गर्भाशय का मुँह बन्द हो जाता है और दोनों कोष एक होकर बढ़ना प्रारम्भ कर देते हैं। इसे ही हम *स्त्री के गर्भ रह जाना* कहते हैं।

होते रज-कोष भी बहुत सूक्ष्म हैं। और जैसा कि मैंने कहा है, वे चौदह पंन्द्रह वर्ष की अवस्था के बाद ही लड़कियों के
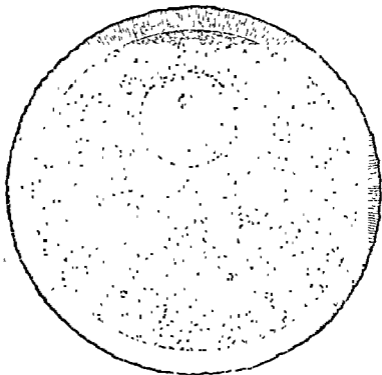
स्त्री का रजकोष (५०० गुना बढ़ाया हुआ)

शरीर के अन्दर पक कर तैयार होते हैं और प्रति मास बाहर निकलते रहते हैं। यह एक रजकोष का चित्र है। यहाँ पर यह .
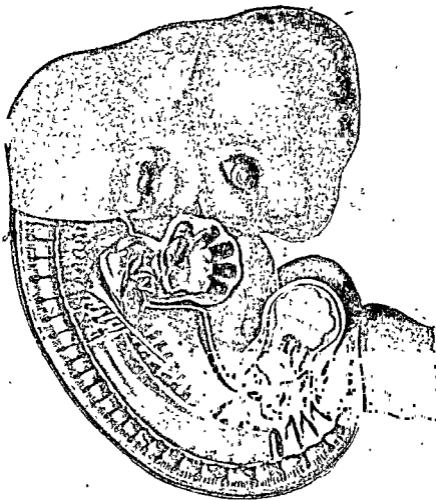
५ सप्ताह का, $\frac{१}{२}$ इंच लम्बा मनुष्य-भ्रूण—१० गुना बढ़ाया हुआ

– ६ सप्ताह का मनुष्य भ्रूण—असली का आधा आकार

५०० गुना बड़ा कर के दिखाया गया है। यह देखने में गोल है, परन्तु वीर्य-कोष से मिलने के बाद इसका आकार बदलने लगता है। चित्र से तुम इसकी सूक्ष्मता का अन्दाज लगा सकते हो। इतनी छोटी चीज के धीरे-धीरे बढ़ने और एक पूरे बालक के रूप में प्रकट होने में काफी समय लगता है। पूरे नौ महीने लगते हैं!

संयोग के बाद ही मा को गर्भ रहने का पता चल जाता है। वह समझ जाती है कि उसके गर्भ रह गया है। पहली बात तो यह होती है कि गर्भाशय का मुँह बन्द हो जाने और रज-ग्रन्थियों में रज का बनना बन्द हो जाने की वजह से रज का बाहर निकलना बन्द हो जाता है। इसके अतिरिक्त उसे कुछ अजीब सा लगने लगता है। काम में मन नहीं लगता। बदन टूटता है। अक्सर सिर में दर्द भी होता है। परन्तु ये लक्षण शीघ्र दूर हो जाते हैं। केवल पेट का आकार अवश्य बढ़ता जाता है।

बालक जब आधा बन चुकता है, अर्थात जब वह चार महीने से ऊपर का हो जाता है, तब मा को ऐसा लगता है मानो उसके पेट में कोई उछल-कूद कर रहा है।

मा को इससे बड़ा सुख मिलता है। वह मन ही मन बड़ी प्रसन्न होती है। बच्चा गर्भ के भीतर कभी हाथ चलाता है, कभी पैर

चलाता है। कभी सिर घुमाकर मा को ठोकर मरता है, कभी अँगड़ाई लेता है और कभी करवट बदलने की कोशिश करता है। तब मा के कान मे मानो कोई कहता है—"अई ता ! देखती हो ! मैं कहाँ हूँ ?" मा तब आनन्द से विह्वल हो कर मानो कहती है "हाँ देखती हूँ। मगर तू इतनी धूम क्यों मचाता है। चुप क्यो नही रहता। अभी तेरे बाहर आने में काफी देर है !"

गर्भवती होने पर मा बहुत सँभल कर रहती है। वह अच्छा और पौष्टिक भोजन करती है। कस कर कपड़ा नहीं पहनती। अधिक परिश्रम नहीं करती। जहाँ तक होता है आराम से रहने का प्रयत्न करती है। बच्चे के स्वास्थ्य के लिए यह सब बहुत जरूरी है।

गर्भ के भीतर बालक धीरे-धीरे बढ़ता है। शुरू में वह मांस का एक लोथड़ा सा होता है। धीरे-धीरे उसके अंग-प्रत्यंग बनते और विकसित होते हैं। सिर बनता है, हाथ बनते हैं, पैर बनते हैं, और बाल और नाखून भी बनते हैं। तब वह पेट में इधर से उधर चलता मालूम देता है। धीरे-धीरे वह एक पूरा बालक बन जाता है।

परन्तु गर्भ के भीतर वह न तो मुँह से भोजन ही कर पाता है और न फेफड़ों से सांस ही ले पाता है।

तब मा के पेट में उसका पालन-पोषण कैसे होता है ? वह जिन्दा कैसे रहता है ? कहाँ से साँस लेने को हवा मिलती है, और कहाँ से भोजन ही मिलता है ?

यह सब उसे मा से मिलता है। प्रकृति की तरफ से मा के शरीर में ही बच्चे के पालन-पोषण का पूरा इन्तज़ाम होता है। मा को स्वयम् इसकी कोई चिन्ता नहीं करनी पड़ती, परन्तु उसे इस बात का ध्यान अवश्य रखना पड़ता है कि प्रकृति के काम में कोई बाधा उपस्थित न हो।

इसीलिए वह साफ हवा में रहती है। सादा और पौष्टिक भोजन करती है और ऐसा कोई काम नहीं करती, जिससे बालक को कष्ट पहुँचे।

मा के पेट में जिस कोठरी के भीतर, बालक बन्द रहता है, वहाँ माँस की एक मोटी झिल्ली तैयार होती है। यह झिल्ली बच्चे के शरीर से चिपकी रहती है। और उससे बच्चे की रक्षा ही नहीं होती, बल्कि पालन-पोषण भी इसके ज़रिये हीं होता है। इस झिल्ली को *कमल* कहते हैं।

कमल का सम्बन्ध मा की रुधिर-वाहिनी नाड़ियों से होता है। इन नाड़ियों में होकर मा के शरीर का ताजा रुधिर सदैव कमल में आता रहता है। तुम कह सकते हो कि यह झिल्ली सदैव रुधिर से भरी रहती है।

बच्चा इस झिल्ली में ही आराम से लिपटा पडा रहता है। वह बच्चे के लिए बढिया गद्दे का काम देती है।
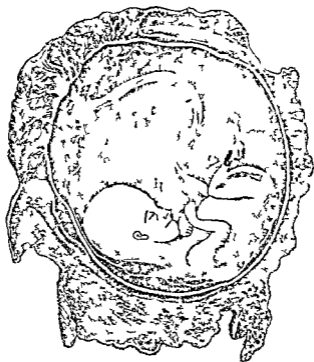
३ महीने का गर्भ, (असली आकार)
नाल टुंडी से निकल कर कमल से मिली दिखायी गयी है

इस कमल में होकर एक नाल निकलती है। वह बच्चे के पेट के बीचोबीच उस जगह जुडी होती है जिसे हम नाभि या

टुंडी कहते हैं। पोषण और सांस लेने का काम इसके जरिये ही होता है। नाल में होकर रुधिर की नसें जाती हैं। इन्हीं में होकर मा का रुधिर दौड़ता है जिसके द्वारा भोजन की आवश्यक सामग्री बच्चे के शरीर में पहुँचती रहती है। नाल में कुछ और भी नसें होती हैं। उनका काम बचे हुए रुधिर को वापिस ले जाना है।

इस प्रकार शुरू में बच्चा मा के सहारे ही जीवित रहता और बढ़ता है। बच्चे के बढ़ने के साथ वह झिल्ली भी बढ़ती है जिससे बच्चा ढका रहता है और साथ ही गर्भाशय भी फैलता जाता है।

साधारण अवस्था में गर्भाशय एक छोटी सी नासपाती के बराबर होता है। परन्तु नवें महीने में गर्भ का बालक काफी बड़ा हो जाता है—क़रीब एक फुट के। शरीर की अपेक्षा सिर कुछ बड़ा होता है और वज़न भी ४-५ सेर के लगभग हो जाता है। तब गर्भाशय भी उसी हिसाब से फैलता है और उसकी वजह से भीतर के अंग ऊपर की तरफ़ उठ जाते हैं और मा का पेट बाहर निकल आता है।

गर्भ के इस बढ़ते हुए बालक में कम या अधिक परिमाण में माता-पिता की सभी विशेषताएँ मौजूद रहती हैं। बच्चा अकसर देखने में माता-पिता की तरह ही होता है। उसके चेहरे

की बनावट भी वैसी ही होती है—आँख, कान, नाक यहाँ तक कि नाखून आदि भी वैसे ही होते हैं—जैसे माता-पिता के।

गर्भ का बालक माता-पिता के शरीर का ही तो एक अंग है। इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उनके गुण-दोष भी सन्तान में मौजूद रहते हों। माता-पिता यदि स्वस्थ हुए तो बालक भी स्वस्थ होता है और यदि वे रोगी और दुर्बल हुए तो सन्तान भी वैसी ही होती है। उसमें उनके सभी गुण-दोष, सभी अच्छी-बुरी आदतें, थोड़े या बहुत अंश में अवश्य मौजूद रहती हैं। संसार में आकर बालक जब बड़ा होता है तब वे सब धीरे-धीरे उसमें प्रकट होने लगती हैं।

नौ महीने में बालक के सब अंग-प्रत्यंग बन चुकते हैं। और जब वह बाहर आने के योग्य होता है तब गर्भाशय में पीड़ा होती है। बच्चे को बाहर निकालने के लिए पेट की नसें तनती हैं। मा के इससे बड़ा दर्द होता है। वह जाकर लेट जाती है और घर के लोग प्रसव का इन्तज़ाम करते हैं। मा के लिए—जिसे इस दशा में प्रसूता कहते हैं—साफ कपड़े बिछा दिये जाते हैं और दाई बुलायी जाती है जो बच्चे के जनने में मा की मदद करती है।

बच्चा ज्यों-ज्यों नीचे आता है त्यों-त्यों गर्भाशय के नीचे का मुँह खुलता है और साथ ही जननेन्द्रिय भी फैल कर चौड़ी हो जाती और बच्चे को निकलने का रास्ता देती है।

इसमें मा को बड़ा कष्ट होता है। कई दिनों तक उसे बहुत तकलीफ रहती है। परन्तु बच्चा जब बाहर निकल कर खुली हवा में साँस लेता और दूध के लिए रोता है तो वह अपनी सारी प्रसव-वेदना क्षण भर में ही भूल जाती है। मानो कुछ हुआ ही नहीं।

बालक के जन्म के साथ ही नाल समेत कमल भी बाहर निकलता है, क्योंकि उसकी अब कोई आवश्यकता नहीं रहती। उसका काम अब खतम हो चुका है।

जैसे ही बालक जन्मता है, दाई उसे उठा लेती है और नाभि के पास नाल को एक साफ़ डोरे से खूब कस कर बाँध देती है। फिर डोरे के ऊपर से नाल को काट कर अलग कर देती है। कटे हुए स्थान पर एक साफ़ पट्टी बाँध दी जाती है। यह स्थान शीघ्र भर जाता है, परन्तु उसका निशान मौजूद रहता है। वह स्थान हमारी *नाभि* है। नाल का काटना एक आसान काम है, परन्तु उसमें सफाई की अत्यन्त आवश्यकता होती है।

गर्भ से बाहर आकर बालक स्वतन्त्र रूप से अपने फेफड़ों से साँस लेने लगता है। उसे अब नाल की जरूरत नहीं रहती इसीलिए वह काट दी जाती है।

पशुओं में नाल काटने का काम माता ही करती है। प्रकृति ने स्वभाव से ही उन्हें ऐसा बनाया है कि बच्चे का

जन्म होते ही वे अपने मुंह से तुरन्त उसकी नाल काट डालते हैं।
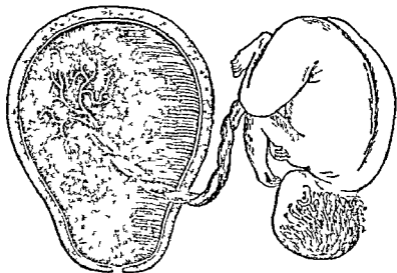
बालक गर्भ से बाहर आ गया है, परन्तु नाल का छोर-कमल-अभी गर्भाशय में चिपका है

नाल जब गर्भाशय से अलग होती है तो रुधिर की बारीक नसें टूटती हैं और उनके टूटने से बहुत सा रुधिर भी बच्चे के साथ ही बाहर निकल पड़ता है। कमल के अलग होने से गर्भाशय को इतना धक्का लगता है कि उसमें से कई दिन तक रुधिर जारी रहता है। उसके बाद क्षत स्थान धीरे धीरे भर जाता है और गर्भाशय सिकुड़ कर पहले जैसा हो जाता है।

प्रसव के बाद मा बड़ी कमज़ोर हो जाती है। उसे पूर्ण विश्राम की आवश्यक्ता होती है। इसलिए वह चारपाई पर लेटी रहती है। परन्तु बालक को जब नहला धुला कर और स्वच्छ कपड़े पहना कर दूध पिलाने के लिए पहले पहल उसके पास लेटाते हैं, उस समय उसे जो अपार हर्ष और आनन्द होता है उसका वर्णन हम नहीं कर सकते !

मा अपने इस बच्चे को कितना प्यार करती है, उसका कैसे लालन पालन करती है, और उसके लिए जन्म भर कितने कष्ट झेलती है, ये सब बाद की बातें हैं। सन्तू ने पूछा था कि मा के पेट मे भैया कहाँ से आया। और मैंने उसे बताया कि वह कैसे और कहाँ से आया। क्यों न सन्तू ?

अच्छा, आओ, अब हरी-हरी घास पर बैठकर जरा बगीचे की शोभा देखें। बाकी बातें फिर कभी होंगी।

इस विषय के कुछ पठनीय ग्रन्थ

—:o:—

जीव की कहानी लिखने में निम्नलिखित पुस्तकों से बड़ी सहायता मिली है। साथ ही पुस्तक के अधिकांश चित्र भी इन्हीं ग्रन्थों से लिये गये हैं। लेखक एतदर्थ इनका कृतज्ञ है।

1. The Evolution of Man — Ernest Haeckel

2. The outline of Natural History — J. Arthur Thomson

3. Secret of Animal life — J. Arthur Thomson

4. The Wonder of Life — J. Arthur Thomson

5. Science of Life — H G Wells

he Physiology of Reproduction. — Marshall

7. Towards Racial Health — Norah H. March

olution of Sex — Patrick Geddes and J. Arthur Thomson

9. How We are Born — Mrs. N. J.

10 . What Every Mother Should Tell — Margaret Sanger

11. Nature Study — Donald Patton

of an Indian Village — Duglas Dewar

13. पक्षी-परिचय — पारसनाथ सिंह

—

सरल-ज्ञान-माला

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की कितनी कमी है, पाठकों को यह बताने की आवश्यकता नहीं है। यद्यपि इस ओर जन-साधारण का ध्यान आकृष्ट हो रहा है परन्तु फिर भी हमारी सम्मति में अभी इस ओर उचित प्रयत्न नहीं किया जा रहा है। हमारे देश के लिए इस प्रकार के वैज्ञानिक साहित्य की बड़ी आवश्यकता है, जो आबाल, वृद्ध और वनिता, सब के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध हो, जो सरल और सुबोध भाषा में लिखा गया हो और जिसे पढ़कर विज्ञान की सामान्य बातों को जानने की उत्सुकता लोगों में बढ़े।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही हमने—**सरल ज्ञान माला** नाम की एक पुस्तकमाला के प्रकाशन का आयोजन किया है। इस माला में जीव-विज्ञान, ज्योतिष, रसायन-शास्त्र, भौतिक शास्त्र, राजनीति, इतिहास आदि विषयों पर प्रतिमास सुन्दर पुस्तकें प्रकाशित होंगी। ये पुस्तकें यद्यपि बालकों के उपयोग की दृष्टि से लिखी गयी होंगी, परन्तु इनमें विज्ञान के गम्भीर से गम्भीर सिद्धान्तों का समावेश होगा। अतएव ये बालकों और विद्यार्थियों के लिए ही लाभप्रद न होकर सर्व-साधारण के लिए भी ज्ञानवर्द्धक और उपयोगी सिद्ध होंगी। इन पुस्तकों के प्रकाशित करने का यही हमारा उद्देश्य भी है।

हम प्रति वर्ष इस प्रकार की बारह पुस्तकें प्रकाशित कर रहे हैं। जिनमें से पाँच पुस्तकें प्राय प्रकाशित हो चुकी हैं। बाकी भी शीघ्र प्रकाशित होंगी।

प्रत्येक पुस्तक १५० से लेकर १८० पृष्ठ तक की होगी। विषय के अनुसार पुस्तकों में काफी चित्र रङ्ग, जैसा आप इस पुस्तक में देख रहे हैं। छपाई, सफाई, बहुत आकर्षक और सुन्दर होगी। प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) होगा। परन्तु जो सज्जन एक साथ बारह पुस्तकों के ग्राहक बन जायँगे, उन्हें हम एक वर्ष की प्रकाशित पुस्तकें केवल १०) में देंगे।

माला की पहली पुस्तक

पदार्थ-परिचय

लेखक—श्री कृष्णानन्द गुप्त

गुप्तजी हिन्दी के एक प्रसिद्ध लेखक हैं। उन्होंने अँगरेज़ी के बालकोपयोगी वैज्ञानिक साहित्य का विशेष रूप से गम्भीर अध्ययन किया है। बालकों के लिए वैज्ञानिक साहित्य की रचना करना उनके जीवन का एक ध्येय रहा है। अतएव कई वर्ष तक इस विषय का अध्ययन करने के बाद वे अब इस काम में प्रवृत्त हुए हैं।

कठिन से कठिन विषय को वे किस प्रकार सरल बनाकर लिख सकते हैं, इसका परिचय आपको उनकी **पदार्थ-परिचय** नाम की पुस्तक से लगेगा। कथोपकथन के रूप में विज्ञान का साधारण ज्ञान प्राप्त कराने वाली यह हिन्दी में अपने विषय की सबसे पहली पुस्तक है। इसे आप हमारी अन्य प्रकाशित होने वाली वैज्ञानिक पुस्तकों की भूमिका कह सकते हैं। गुप्तजी ने इसी दृष्टिकोण से इसे लिखा भी है।

पुस्तक में १५ अध्याय हैं। पदार्थों का रूप, पदार्थ कैसे बनते हैं?, गरमी क्या है?, शब्द क्या है?, प्रकाश और रँग, विद्युत, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, सूर्य, चन्द्रमा और ग्रह, शक्ति क्या है?, इन्द्रधनुष, और रसायन शास्त्र आदि अध्यायों में विज्ञान की सभी साधारण बातों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। लेखक का ध्येय है विज्ञान की सभी बातें न बतला कर उसकी मोटी मोटी बातों का खाका खींचना, जिससे साधारण पाठक की रुचि बढ़े और वह अधिक जानकारी के लिए इस विषय की अन्य पुस्तकें पढ़ने के लिए उत्साहित हो।

अणुवीक्षण यन्त्र, बिजली की भट्टी, रेडियो, टेलीफोन, ईथर तरगें, बेतार के खम्भे, चन्द्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहण, प्रिज़म, इन्द्रधनुष आदि के पूरे पेज के चित्र और छोटे-छोटे अन्य चित्रों के द्वारा विज्ञान की बातों को समझाने का प्रयत्न किया गया है।

माला की दूसरी पुस्तक

नागरिक जीवन

लेखक—श्री कृष्णानन्द गुप्त

नागरिक शास्त्र सम्बन्धी इस पुस्तक में गुप्तजी ने साधारण पाठकों के लिए सार्वजनिक जीवन में जानने योग्य सभी बातों का समावेश किया है। पुस्तक की विशेषता है नान-टैकनिकल भाषा और सरल तथा सुबोध शैली में नागरिक शास्त्र जैसे शुष्क विषय का प्रतिपादन।

पुस्तक में सरकार क्या है? क़ानून क्या है? समाज क्या है? सार्वजनिक जीवन क्या है? व्यक्ति का समाज से क्या सम्बन्ध है? एक नागरिक के क्या अधिकार हैं? पड़ोसी धर्म क्या है? आदि विषयों पर बड़े सीधे दृष्टान्त देकर प्रकाश डाला गया है। समाज की उन्नति और उसका उद्देश्य, सहयोग की आवश्यकता, जीवन के मार्ग पर, नागरिकता की पहली सीढ़ी—स्कूल में, सार्वजनिक जीवन, सार्वजनिक कार्यकर्त्ता, स्वयम् सेवक, नियम और अनुशासन आदि जानने योग्य सभी बातों का वर्णन किया गया है। गार्हस्थ्य जीवन, हमारा सामाजिक जीवन और हमारे देश की स्थिति पर समाज के प्रभाव का भी दिग्दर्शन कराया गया है।

पुस्तक स्कूल के विद्यार्थियों के लिए लिखी गयी जान पड़ती है, परन्तु लेखक का यह उद्देश्य नहीं था कि स्कूल के विद्यार्थी ही यह किताब पढ़ें, इसलिए उसे व्यापक रूप दिया गया है। वस्तुतः यह पुस्तक साधारण पाठक के लिए ही लिखी गयी समझी जानी चाहिए। इस विषय पर साधारण पाठकों के लिए सरल-सुबोध भाषा में लिखी गयी और कोई पुस्तक नहीं है।

हिन्दी के सभी लेखकों और पत्र सम्पादकों ने इस पुस्तक की प्रशंसा की है, और लेखक को उसके लिए बधाई दी है।

माला की तीसरी पुस्तक

जीव की कहानी

लेखक—श्री कृष्णानन्द गुप्त

पुस्तक का विशेष परिचय देने को हमें आवश्यकता नहीं जान पड़ती। पदार्थ-परिचय में लेखक ने भौतिक जगत का परिचय मात्र दिया है। जीव की कहानी में जीव-जगत के एक अत्यन्त रोचक पहलू की चर्चा बड़े सुन्दर ढँग से की गयी है। एक छोटा बालक जिज्ञासा के वशीभूत हो अपने मास्टर से पूछ लेता है, बच्चे कैसे पैदा होते हैं? और मास्टर साहब ने जिस सुन्दर ढँग से बच्चे की जिज्ञासा को शान्त

क्रिया उसकी हमें प्रशंसा करनी होगी। हम चाहते हैं कि पुस्तक प्रत्येक बालक के हाथ में रहे। इतना ही नहीं, जो लोग प्रौढ़ होने के कारण ही अपने को अधिक ज्ञानवान समझते हैं, हमारा विश्वास है, पुस्तक उनके लिए भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

इसके सुन्दर और महत्त्वपूर्ण चित्रों में एक विशेष आकर्षण है। सारी सृष्टि में जो समानता है, उसका यह एक सजीव दिग्दर्शन है।

माला की चौथी पुस्तक

हमारा शरीर

लेखक—श्री शालिग्राम वर्मा एम० ए०, बी० एस-सी०

'विज्ञान' जगत के सुपरिचित और प्रवीण लेखक—वर्मा जी हिन्दी के एक पुराने और प्रसिद्ध साहित्यिक हैं। विज्ञान में जिन्होंने उनके लेख पढ़े हैं वे इस बात को अवश्य ही स्वीकार करेंगे कि वे गम्भीर से गम्भीर वैज्ञानिक विषयों को कितना सुलझा कर लिख सकते हैं। बालकों के लिए साधारण ज्ञान विषयक कहानियाँ लिखने में तो वे खूब सिद्धहस्त हैं। हमारा शरीर उन्हीं की एक सुन्दर रचना है।

इस पुस्तक में अत्यन्त सरल भाषा में शरीर और उसकी बनावट का परिचय दिया गया है। शरीर, उसके मुख्य भाग, पोषण, रक्त-सञ्चार, श्वासोच्छ्वास, स्नायु संस्थान, आदि विषयों का आपको उतना ही विस्तृत और सुन्दर विवेचन मिलेगा जितना कि इस विषय के किसी

एक आवश्यक निवेदन—

"सरल ज्ञान माला" में प्रकाशित पुस्तकें हमारे जिन पाठकों को पसन्द आयी हों, और जो उन्हें अपने और अपने परिवार के अन्य व्यक्तियों के लिए खरीदने की इच्छा रखते हों उनकी सुविधा के लिए हमने कुछ विशेष नियम बनाये हैं। आशा है पाठक उनसे लाभ उठावेंगे।

सरल ज्ञान माला के अन्तर्गत हम वर्ष में कम से कम बारह पुस्तकें प्रकाशित करेंगे। ये पुस्तकें विज्ञान सम्बन्धी विविध विषयों पर होंगी, और अधिकारी लेखकों द्वारा लिखी जायेंगी। इन बारह पुस्तकों के पूरे सेट का दाम १) प्रति पुस्तक के हिसाब से १२) होता है। परन्तु जो सज्जन १) पेशगी देकर हमारे पूरे सेट के ग्राहक बनने के लिए आर्डर फार्म भर कर भेज देंगे उनको हम ६ पुस्तकें अपने रिआयती दामों पर अर्थात् ५) में वी० पी० द्वारा भेज देंगे। उसके पश्चात उनको १) काट कर बाकी ६ पुस्तकें ५) की वी० पी० द्वारा भेज दी जायेंगी। पोस्टेज प्रत्येक दशा में ग्राहकों के जुम्मे ही होगा। परन्तु जो ग्राहक ५) पेशगी मनीआर्डर या पोस्टल आर्डर द्वारा भेजेंगे उन्हें हम बिना किसी पोस्टेज के ही किताबें डाक या रेल के ज़रिए भेज देंगे।

हम आशा करते हैं हमारे प्रेमी पाठक इस योजना से लाभ उठा कर हमें उत्साहित करने की कृपा करेंगे, और इस प्रकार पुस्तकों के प्रचार में भी हमारे सहायक होंगे।

———